अपना देश : पड़ोसी देश

लेखक

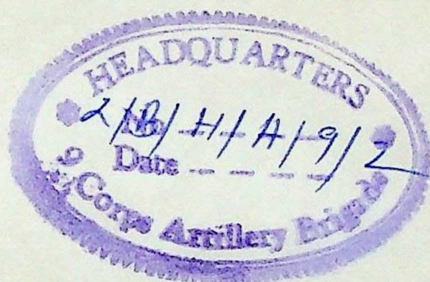
नन्दलाल वानप्रस्थी

प्रकाशक

पं० नन्दलाल वानप्रस्थी

वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर, उत्तर प्रदेश

221



अपना देश : पड़ोसी देश

नन्दलाल वानप्रस्थी



राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली

मूल्य : ३ रुपये ५० पैसे

प्रकाशक :
नन्दलाल वानप्रस्थी
वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर, उत्तर प्रदेश

मुद्रक :
शक्तिपुत्र मुद्रणालय
१०-बी, ईस्ट एवेन्यू मार्केट
पंजाबी बाग, नई दिल्ली-२६

विषय-सूची

समर्पण

इस पुस्तक का समर्पण दो आदरणीय महानुभावों के चरण कमलों में करता हूँ जिनकी विशिष्ट प्रेरणा और मार्ग दर्शन से ही मैं बिना किसी प्रकार की असाधारण योग्यता के भी, वैदिक धर्म का तुच्छ प्रचारक और जन सेवक बन सका हूं।

प्रथम हैं श्री लाला बनारसी दास जी मलहोत्रा जो (अब पश्चिम पाकिस्तान में) जिला स्यालकोट के अन्तर्गत उग्गोकी कस्बा के पब्लिक हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक थे। आप दृढ़ आर्य, धर्म निष्ठ, सहानुभूति शील, सर्वथा निर्भीक और शुद्धि के अनथक, लगनशील कार्यकर्त्ता थे। छात्रों और युवकों के जीवन निर्माण में विशेष दिलचस्पी लेते थे।

द्वितीय हैं स्वर्गीय महात्मा देवीचन्द जी, अध्यक्ष दयानन्द साल्वेशन मिशन, होशियार पुर और भूतपूर्व प्रिन्सिपल डी० ए० वी० कालेज होशियार पुर। आपकी छत्रच्छाया में ही मुझे दो दशक से अधिक इस मिशन की ओर से समूचे भारत में प्रचार कार्य का सौभाग्य प्राप्त हुआ। महात्मा जी अनेक अद्भुत गुणों के पुंज थे। आपके जीवन का प्रत्येक क्षण आर्य समाज, हिन्दू रक्षा और राष्ट्र हित में अर्पित था। आपके चरणों में बैठे मैंने जो कुछ सीखा है, उससे इस जन्म में तो कभी उऋण नहीं हो सकूंगा।

दोनों नरपुंगवों को, विनम्रता पूर्वक, शतशः प्रणाम।

बिनीत,

नन्दलाल बानप्रस्थी

आभार प्रदर्शन

इस पुस्तक को पाठकों तक पहुंचाने का श्रेय मुझे इतना नहीं है जितना कि मेरे कुछ आदरणीय बन्धु, मित्र, स्नेह भाजन और सहयोगी वर्ग को है। सबसे पूर्व मैं सम्माननीय भाई पं० दीनानाथ सिद्धान्तालंकार जी का कृतज्ञ हूं जिन्हों ने मुझे अपने यात्रा संस्मरण लिखने की प्रेरणा ही नहीं दी, किन्तु उसकी रूप रेखा भी तैयार कर दी। इस प्रेरणा को मूर्त रूप देने का दायित्व डा० सत्येन्द्र तनेजा, प्राध्यापक हंसराज कालेज, दिल्ली अगर न लेते और इधर-उधर बिखरा पाण्डुलिपियाँ और समाचार पत्रों में प्रकाशित मेरे लेखों को व्यवस्थित रूप न देते तो मेरे समूचे संकल्प अधर में ही रह जाते। सत्येन्द्र जी मेरे स्नेह भाजन हैं, इसलिए उनका धन्यवाद तो क्या, उनके प्रति मेरी अपनी भूरि-भूरि शुभ कामना ही उपयुक्त है।

यहाँ कुछ विशिष्ट सज्जनों का उल्लेख करना और उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करना मैं अपना परम कर्तव्य समझता हूं—(१) बैंकांक आर्य समाज के सर्व श्री बिजय बहादुर सिंह प्रधान, जय प्रकाश शाही उप प्रधान, राम पलट पाण्डेय मन्त्री और सीता राम सिंह, नरसिंह-शाह (२) मलेशिया की राजधानी कीलालम्पुर के विष्णु मन्दिर के सर्व श्री मक्खन लाल सहगल प्रधान, तीर्थ राम उप प्रधान, अतर-चन्द मन्त्री, युधिष्ठिर कुमार, (३) सिंगापुर आर्य समाज के सर्व श्री दुर्गादास सच देव प्रधान, सेठ राम लुभाया, मेरे विशेष आतिथेय श्री पूर्ण चन्द्र शर्मा, (४)बैंकाक के देव मन्दिर के सर्व श्री राम लाल सचदेव बनवारी लाल, सुदर्शन सिंह, करतार चन्द पाहवा, मोहन लाल महाशय, शिवनाथ राय वजाज आदि।

इन सब महानुभावों के सहयोग से ही मेरी यह विदेश यात्रा सफल हो सकी। विशेषत: उल्लेखनीय श्री शिवलाल भाटिया, मालिक गणेश स्पोर्ट्स जालन्धर तथा उनके बैंकाक निवासी भाई श्री योगेन्द्र पाल भाटिया दम्पति हैं जिनका मेरी इस विदेश यात्रा में सर्वाधिक सहयोग है। पुस्तक प्रकाशन में यदि महाशय मोहन लाल (बैंकाक) सहयोग न देते तो, सम्भवत: यह पुस्तक पाठकों तक न पहुंच पाती।

इन सबका और अन्य अनेक बन्धुओं का जिनका उल्लेख स्थानाभाव से अथवा मेरी भूल से रह गया है, उनके प्रति क्षमा प्रार्थी होता हुआ सबका हार्दिक आभारी हूं। इस प्रसंग में स्वर्गीय म० ठाकुर दास गरोवर लायल पुर निवासी को कभी नहीं भूल सकता जिन्होंने मुझे आर्य समाज में दीक्षित किया।

नन्दलाल बानप्रस्थी

यात्रा प्रिय पं० नन्दलाल जी वानप्रस्थी

उज्वल जीवन : आलर्श व्यक्तित्व : सफलता के प्रतीक

श्री पं० नन्दलाल वानप्रस्थी आर्य समाज एवं भारत माता के मस्तक को देश-विदेश में ऊंचा करने वाले अनथक, लगनशील, ठोस और कर्मठ कार्यकर्ता हैं। मेरा उनसे लगभग तीन दशक से घनिष्ठ परिचय है। गत लगभग आधी सदी से आप निरन्तर सार्वजनिक क्षेत्र में, बिपरीत परिस्थितियों के बावजूद, मौन जन सेवक के रूप में सक्रिय है। युवावस्था में ही आपका आर्य समाज के साथ निकट सम्बन्ध हो गया। साथ ही, आप सन् १९१९ में कांग्रेस आन्दोलन में, बिना परिवार के प्रति किसी भी प्रकार के मोह के, कूद पड़े। उन दिनों चकझुमरा, ज़िला लायल पुर (अब पश्चिमी पाकिस्तान में) में इनकी पुस्तकों की दूकान थी। आर्य समाज के प्रति आप मेरे पूज्य पिना स्वर्गीय ला० हीरा नन्द जी के पवित्र और साधु जीवन ने आकृष्ट हुए। मेरे पिताजी डाकखाना विभाग में उच्च पदस्थ होते हुए भी वैदिक धर्म और आर्य समाज के निष्ठावान् प्रमुख सदस्य थे। पिताजी चकझुमरा में अपने बहनोई के पास आते रहते थे। उन्हीं के सत्संग से नन्दलाल जी केजीवन की दिशा एकदम बदल गयी।

कांग्रैस त्याग – आर्य समाज में प्रवेश

चकझुमरा में आप कांग्रेस समिति के मन्त्री और ज़िला लायलतुर कांग्रेस के उपमन्त्री थे। सन् १९१९ से १९३० तक पण्डित जी अनेक बार कारावास यात्री बने।

कांग्रेस की मुस्लिम परस्त नीति के विरोध में इस क्षेत्र का परित्याग कर पण्डित जी पूर्ण रूपेण आर्य समाज के प्रचार कार्य में जुट गये। सन् १९१९

से १९४७ तक दयानन्द सालवेशन मिशन होशियार पुर के मुख्य उपदेशक और उत्साही वैदिक मिशनरी के रूप में ये समूचे भारत में प्रचार यात्राएं करते रहे। उस समय ये मैजिक लैनटर्न की सहायता से प्रचार करते थे। इनके मैजिक लैनटर्नों के स्लाइड्स वहुत लोकप्रिल थे। इस मिशन में कार्य करते हुए इन्होंने गुण्डों के हाथों अनेक हिन्दू महिलाओं का उद्धार किया और सेंकड़ों मुस्लिम-ईसाई परिवारों की शुद्धि की।

मालवीय जी के रेल डिब्बे के आगे सत्याग्रह

जिन दिनों आप कांग्रेस के सरगर्म कर्मी थे उन दिनों इनमें देश सेवा की कितनी प्रबल भावना थी —यह कई घटनाओं में से एक उल्लेखनीय घटना से स्पष्ट हो जायेगा। सितम्बर सन् १९३० की बात है। नन्दलाल जी चकझुमरा ज़िला लायलतुर (अब पश्चिमी पाकिस्तान में) कांग्रेस कमैटी के मन्त्री थे। तत्कालीन देश नेता महामना पं० मदनमोहन मालवीय जी लाहोर से लायलपुर एक सार्वजनिक सभा में भाषण देने को लिये विशेष रूप से आमन्त्रित थे। रेलगाड़ी से यात्रा करते हुए प्रत्येक स्टेशन पर उनका भव्य स्वागत हो रहा था। जिस समय यह गाड़ी चकझुमरा पहुँची तो स्टेशन पर भारी जन समूह उनके स्वागत के लिये खड़ा था। गाड़ी बीच के स्टेशन पर पांच—सात मिनट ही रुकती थी। मन्त्री की हैसियत से नन्दलाल जी ने मालवीय जी के निजी सचिव से अनुरोध किया कि मालवीय जी का भाषण सुनने के लिये यहां की जनता अत्यन्त उत्सुक है; इसलिए एक-आध घन्टे के लिये उन्हें यहां उतरने की स्वीकृति दे दें। नगर के प्रमुख व्यक्तियों द्वारा प्रबल अनुरोध करने पर भी मालवीय जी के निजी सचिव नहीं माने। इस पर नन्दलाल जी को जोश आ गया। उन्होंने दृढ़ स्वर में कहा, 'मैं भी नन्दलाल हूं। देखता हूं, कैसे मालवीय जी यहां नहीं उतरते।' यह कहकर वे अपने अनेक स्वयं सेवकों सहित इन्जिन के सामने रेल पटरी पर लेट गये। रेल-अधिकारिओं के इशारे पर ड्राईवर ने इन्जिन में से गर्म भाप, पानी और

धूँआ इन पर छोड़ा, पर ये टस से मस नहीं हुए। मालवीय जी तक यह मामला पहुंचा। उन्होंने नन्दलाल जी के दृढ़ निश्चय की प्रशंसा की और रेल गाड़ी से उतर वहां ही सार्वजनिक सभा में भाषण दिया। मलवीय जी, निश्चय ही लायलपुर देर से पहुंचे पर नन्दलाल जी सदृश उत्साही कार्य-कर्ता को निराश करना उचित नहीं समझा। रेलगाड़ी रोकने के अपराध में आप पर रेलवे कानून की धारा १२८ के अनुसार मुकद्दमा चला जो छः माह तक जारी रहा। आपने जुर्माना देकर विदेशी सरकार की कोष बृद्धि करने की अपेक्षा स्वय सात मास का कारावास दण्ड सहर्ष स्वीकार किया।

लाहौर में गांधी जी के साथ मुलाकात:

कांग्रेस के स्वराज्य आन्दोलन में निर्भयता के साथ प्रमुख भाग लेते हुए भी आपने आर्य समाज के सिद्धान्तों के साथ कभी समझौता नहीं किया। सन् १९३४ में जब ब्रिटिश सरकार ने साम्प्रदायिक निर्णय (कम्युनल एवार्ड) की घोषणा की, जिसके अन्तर्गत दलित जातियों को हिन्दू समाज से विच्छिन्न कर दिया गया था और गांधी जी ने इसके विरोध में यरवदा जेल में आमरण अनशन व्रत ग्रहण किया था, उस समय सारे देश में दलितों के प्रति समानता के व्यवहार का प्रवल आन्दोलन चल पड़ा था। गांधी जी ने इन दलितों को हरिजन नाम देकर विशिष्ट और सम्माननीय पद देना चाहा था। इसी प्रसंग में हरिजन कोष इकट्ठा करने के लिए गांधी जी ने सारे देश का भ्रमण किया। ४ जून सन् १९३४ को गांधी जी लाहौर आये। प० बुद्धदेव विद्यालंकार जी (बाद में स्वामी समर्पणानन्द जी) के नेतृत्व में आर्य समाज का एक शिष्ट मंडल गांधीजी से मिला। इसमें होशियार पुर डी० ए० वी० कालेज के प्रिन्सिपल श्री रामदास, श्री सत्यार्थी जी मन्त्री आर्य स्वराज्य सभा' पंजाब और कुछ हरिजन नेता इत्यादि के अतिरिक्त पं० नन्दलाल जी भी थे। आर्य नेताओं ने गांधी जी द्वारा दलितों को हरिजन नाम दिये जाने का विरोध करते हुए कहा कि इससे हिन्दू जाति में एक पृथक् जाति को जन्म मिल जायेगा। गांधी जी के साथ, उस समय ठक्कर बापा, कस्तूरा बाई, मीरा बाई इत्यादि

भी बैठे थे । आर्य शिष्ट मंडल की इस युक्ति का गांधी जी व उनका कोई साथी उत्तर न दे सका । गाँधी जी की इस भारी भूल के परिणाम स्वरूप आज 'हरिजन' एक पृथक् वर्ग बन गया है और सब जगह सुरक्षित स्थान चाहता है । आर्य शिष्ट मंडल की आशंका आज सत्य सिद्ध हो रही है ।

दक्षिण हैदरावाद सत्याग्रह में जेल यात्रा:

दक्षिण हैदराबाद, जो निज़ाम की रियासत थी··· में हिन्दुओं पर अनेक अत्याचार होते थे। यद्यपि वहां बहु संख्या हिन्दुओं की ही थी तो भी हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता पर प्रतिदिन कुठाराघात हो रहा था । आर्य समाज ने इसका घोर विरोध किया । पर रियासत के कट्टर मुस्लिम मालिक निजाम के कान पर जूं तक न रेंगी । तब आर्य समाज को बाध्य हो महात्मा नारायण स्वामी जी के नेतृत्व में सन् १९३८ में सत्याग्रह आरम्भ करना पड़ा । समस्त भारत से हजारों की संख्या में प्रमुख आर्य नेताओं के नेतृत्व में रियासत में सत्याग्रहियों के जत्थे आने लगे । हैदरावाद रियासत के जेलखानों में जगह न रही। नन्दलाल जी सदृश अनथक, लगनशील आर्य भला कब चैन से बैठ सकता था ? स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी के अतिरिक्त इस आन्दोलन के अग्रगण्य कार्यकर्ताओं में प० नन्दलाल जी थे और रियासत के चारों ओर के प्रदेश और भीतर भी प्रचार करते रहे, यद्यपि वहां प्रचार पर प्रतिबन्ध था, पर इसी सिलसिले में आप गिरफ्तार हुए और कलम, उस्मानाबाद और फिर गुलवर्गा जेलों में स्वर्गीय स्वामी आत्मानन्द जी के साथ रहे । यह सत्याग्रह लगभग छः मास चला । अन्ततः, निज़ाम को झुकना पड़ा और हिन्दुओं की धार्मिक स्वतन्त्रता की मांग स्वीकार करनी पड़ी ।

जब नन्दलाल जी 'न्याज़ अहमद' बने:

जम्मू-कश्मीर रियासत में ···जहां बहुसंख्या मुसलमानों की है, पर राजा हिन्दू हैं और हिन्दू अल्प संख्या में हैं ····उन दिनों शेख अब्दुल्ला मुस्लिम कान्फ्रेंस के नाम की आड़ में हिन्दू राजा और हिन्दुओं के विरुद्ध अनेक प्रकार

गुप्त और रहस्यपूर्ण गतिविधियां चला रहा था। उस समय सच्चे देशभक्त नन्दलाल जी ने अपने को संकट में डाल 'न्याज़ अहमद' के प्रच्छन्नऔर मुस्लिम नाम से राष्ट्र की अमूल्य सेवा की। आपने वहां कई मुस्लिम परिवारों की शुद्धिया कीं। उनके इस साहस की जितनी प्रशंसा की जाय उतनी ही थोड़ी है।

बंगाल के दुर्भिक्ष में सहायता कार्य

सन् १९४३ में बंगाल में मुस्लिम लीगी सरकार कायम हुई। इस सरकार का प्रशासन अत्यन्त गर्हित और अन्याय पूर्ण था। परिणाम स्वरूप बंगाल में भयंकर अकाल पड़ गया। इतिहास में इस अकाल को 'मनुष्य निर्मित अकाल' का नाम दिया गया है, क्योंकि बगाल में चावल इत्यादि अन्न की कमी उस समय नहीं थी। यह अकाल प्राकृतिक नहीं था। मुस्लिम लीग सरकार की गाठ–सांठ से मन्त्रियों और व्यापारियों ने खाद्यान्न को भूमिगत कर दिया था। अंग्रेंजों के साथ मिलकर विदेशों में अत्यधिक लाभ पर यह खाद्यान्न भेजा जा रहा था। द्वितीय विश्व युद्ध अभी चल रहा था। इस दुर्नीति के फलस्वरूप बगाल में जो अकाल पडा वैसा पहले कभी नहीं पड़ा था। लगभग तीस लाख व्यक्ति इस अकाल के ग्रास बने। कलकत्ता नगर की सड़कें तो मक्खियों की तरह लाशों से भरपूर थीं। इस संकट काल में आर्य समाज भला कैसे चुप रह सकता था? महात्मा खुशहाल चन्द जी (इस समय महात्मा आनन्द स्वामी) तथा वीर यज्ञदत्त वर्मा के साथ पं० नन्दलाल जी सेवा–कार्य के लिए तत्काल वहाँ पहुंचे और उन्होंने डा० श्यामा प्रशाद मुखर्जी के तत्वावधान में समस्त प्रदेश में कार्य किया।

पंजाब के हिन्दी रक्षा आन्दोलन में कारावास.

देश विभाजन के पश्चात् आर्य प्रतिनिधि सभा, पंजाब ने आपकी सेवाओं से लाभ उठाया। परन्तु नन्दलाल जी ने लगभग समूचे देश में विस्तृत प्रचार यात्राएं करके निःस्वार्थ सेवाओं द्वारा अपने लिये इतना विशाल क्षेत्र तैयार

कर लिया था कि अब उनका किसी संस्था विशेष की सामाओं में वद्ध रहना सम्भव नहीं था। अतः उन्होंने स्वतन्त्र रूप से आर्य समाज की सेवा करने का निश्चय किया। इसी बीच सन् १९५७ में पंजाब में कैरों-सरकार की पक्षपात पूर्ण नीति तथा नेहरू की अंग्रेजी भाषा पोषक नीति के कारण आर्य समाज को हिन्दी रक्षा आन्दोलन चलाना पड़ा। नन्दलाल जी भला कब इस आन्दोलन से अपने आप को निर्लिप्त रख सकते थे? उनके तो रक्त की एक एक बूंद में अन्याय और अत्याचार का विरोध करने के उष्ण कण सदा उभरते रहते हैं। आप पूर्ण रूप से इन सत्याग्रह आन्दोलन में कूद पड़े। इतना ही नहीं, आपने आर्य समाज अड्डा होशियार पुर, जालन्धर के सत्याग्रहियों के विशाल जन समूह का नेतृत्व किया और अपने को स्वेच्छा से गिरफ्तारी के लिये पेश किया। आप पकड़े गये यौर आन्दोलन की समाप्ति तक जालन्धर जेल में ही रखे गये।

इसी प्रकार १९६६ ई० में आपने गोरक्षा आन्दोलन में भाग लेते हुए दीवान हाल आर्य समाज जत्थे के साथ सत्याग्रह किया और तिहाड़ (दिल्ली) और अम्बाला जेलों में रहे।

नैपाल यात्रा: आर्य समाज का प्रचार.

भारत नैपाल का निकटतम पड़ोसी देश है और विश्व में यही एक मात्र ऐसा देश है जिसे 'हिन्दू राष्ट्र' कहा जा सकता है। नन्दलाल जी की दृष्टि इस ओर गयी। आर्य समाज की ओर से; सम्भवतः, अभी तक कोई प्रचारक वहां नहीं गया था। नन्दलाल जी पहले आर्य प्रचारक थे जिन्होने वहां जाने का निश्चय किया। सन् १९५८ में आप वहां छः मास के लिये गये। जालन्धर में आपका बड़ा भव्य विदाई समारोह आयोजित किया गया। आर्य समाज के तीनों प्रतिनिधि सभाओं तथा स्वर्गीय महात्मा देवीचन्द जी, डा० सूर्यभान, लाला जगत नारायण जी संसद् सदस्य, दीवान बद्रीदास जी, स्वामी सत्यानन्द जी इत्यादि सहित आर्य नेताओं ने सार्वजनिक सभा द्वारा आपको इस साहसिक यात्रा के लिये बधाई, दी और अपने पूर्ण सहयोग द्वारा आपके

मिशन की सफलता की कामना की। 'दैनिक प्रताप' के मालिक और प्रमुख आर्यनेता स्व. म. कृष्णजी और डा० गोकुलचन्द नारंग ने अपने आशीर्वाद और कृष्णजी ने "प्रताप" में विशेष लेख द्वारा पंडितजी को प्रोत्साहन दिया और नैपाल की राजधानी काठमाण्डू में आपने अपना केन्द्र बनाकर व्यक्तिगत रूप से पहले भारतीयों के साथ सम्पर्क स्थापित किये। सरकारी कानून के अनुसार धर्म प्रचार की अनेक प्रकार की रुकावटों के बावजूद पं० जी वहां अपना पैर जमाने में सफल हो गये। फलतः, स्थानीय भारतीय और कुछ नैपाली सज्जनों के सहयोग से काठमाण्डू में आर्य समाज का प्रचार हुआ।

उन दिनों छोटा नागपुर (मध्य प्रदेश) में इसाई और बहाई मत की आड़ में मुसलमानों की गति विधियां तेज हो रही थीं। इनका तत्काल मुकाबला करना आवश्यक था। इसलिये आर्य नेताओं की प्रेरणा से छः मास के बाद नैपाल से वापस आ गये और मध्य प्रदेश तथा बिहार में अधिक संख्या में फैले हुए भील, जनजाति और हरिजनों में वैदिक धर्म का प्रचार किया। विधर्मियों की गुप्त चालों से इन भोले-भाले हिन्दू भाइयों को सावधान करने में नन्दलाल जी विशेष सफल हुए।

गृहस्थ त्याग: वानप्रस्थ आश्रम में

वैदिक धर्म की आश्रम मर्यादा के अनुसार पचास वर्ष की आयु के बाद अथवा पौत्र-पौत्री हो जाने के बाद गृहस्थी को वानप्रस्थ आश्रम में प्रविष्ट हो जाना चाहिए। इस आश्रम में आकर वह पारवारिक बन्धनों से मुक्त हो सारा जीवन आत्म—चिन्तन, स्वाध्याय और जनसेवा में ही अर्पित करता है। नन्दलाल जी ने इस आदेश को अपने जीवन में कार्यान्वित करने का निश्चय किया। यह खेद की बात है कि बहुत कम आर्य सज्जन इस मर्यादा का पालन करते हैं, यद्यपि पारवारिक दायित्व से वे मुक्त होते हैं और आर्थिक दृष्टि से भी आत्म निर्भर होते हैं। पर नन्दलाल जी इस प्रकार आराम-पसन्द जीवन व्यतीत करने के अभ्यस्त नहीं थे। सन् १९६७ फरवरी

में जालन्धर में यजुर्वेद पारायण यज्ञ के पश्चात् आपने विधिवत भक्तराज श्री खेमचन्द जी चान्दपुर वाले से दीक्षा लेकर इस तृतीय आश्रम में प्रवेश किया। ६८ वर्ष की आयु में वानप्रस्थ लेकर आप कार्य विरत व निश्चेष्ट नहीं बन गये, अपितु पहले से भी अधिक-प्रचार संलग्न हो गये। आपने घोषणा की कि ऋषि दयानन्द के ऋण से उऋण होने का यही सर्वोत्तम अवसर है।

असम-नेफा यात्रा और तिब्बत की सीमा तक

इस आश्रम में प्रवेश करने के तत्काल बाद वानप्रस्थी जी ने भारत के सर्वाधिक विस्फोटक क्षेत्र उत्तर पूर्व प्रदेश के अन्तर्गत असम, नागालैंड, (नेफा) मणिपुर, त्रिपुरा प्रदेशों में कई मास प्रचार किया। कई जगह आर्य समाजें स्थापित कीं। इन प्रदेशों में इसाई मिशनरियों और पंचमांगियों की राष्ट्र विरोधी, गुप्त रूप से चल रही देश घातक प्रवृत्तियों की भयानक आंखों देखी स्थिति का वर्णन आपने विविध समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया और आने वाले संकट से देशवासियों, विशेषतः, आर्य जनता को सचेत किया।

इसी प्रकार आपने कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, लद्दाख के सीमावर्त्ती क्षेत्र तथा लाहौल, स्पीति, जहां कई मास बर्फ के कारण मार्ग बन्द रहते हैं और जहां आज तक कोई आर्य प्रचारक नहीं गया है—आपने विविध कष्ट सहते हुए इन क्षेत्रों की यात्रा की और वैदिक धर्म का प्रचार किया।

सफल विदेश यात्रा

इतना ही नहीं, सन् १९७० में आपने दक्षिण पूर्व एशिया के मलेशिया, थाईलैंड, सिंगापुर इत्यादि विदेशों की प्रचार यात्रा छः मास तक की। वहां से वापस आने पर आपने इस विदेश यात्रा पर एक महत्वपूर्ण पुस्तक लिखी जो इस परिचय के साथ पाठकों के हाथ में है।

विदेश यात्रा से पूर्व १५ मई सन् १९७० को आपने आर्य समाज धर्मशाला (हिमाचल प्रदेश) के प्रधान के साथ वहां तिब्बत के सर्वोच्च अधिकारी महामहिम दलाई लामा के साथ भेंट की जो एक घंटा ३५ मिनट तक जारी

रही। पं० नन्दलाल जी ने दलाई लामा को जब यह बताया कि ईश्वरीय ज्ञान वेदों में तिब्बत के लिए "त्रिष्टुप्" शब्द आया है और आदि मानव और वैदिक संस्कृति का यही आदि स्रोत है—तब दलाई लामा बड़े प्रसन्न हुए और नन्दलाल जी ने उन्हें आर्य समाज का साहित्य भेंट करते हुए जब यह कहा कि आप इसे अवश्य पढ़ें, तो दलाई लामा ने कहा—'मैं इसे अवश्य पढूंगा'।

सफल गीतकार

नन्दलाल जी वानप्रस्थी किसी कालेज व विश्वविद्यालय से उपाधि प्राप्त नहीं हैं। आज की शिक्षा की दृष्टि से वे मेट्रिक पास भी नहीं है, पर उनमें कई अद्भुत गुण हैं जिनके कारण वे यशस्वी और ख्याति प्राप्त हैं। आप एक अच्छे कवि और आवश्यकता पड़ने पर मधुर गायक भी हैं। आज के युवक युवती गन्दे, भद्दे, अश्लील और वासना-प्रेरक फिलमी गानों को गुनगुनाते ही नहीं, किन्तु खुले आम सड़कों और बाज़ारों में निर्लज्जता से बोलते व गाते देखे जाते हैं। पण्डित जी ने युवक-युवतियों की इस प्रवृत्ति को रोकने की की दिशा में ठोस कार्य किया है। प्रभु कृपा से आप अच्छे गीतकार और कवि हैं। आपने फिलमी तर्जों पर ही प्रभु भक्ति, धर्म एवं राष्ट्र प्रेम पूर्ण, ऐतिहासिक और आधुनिक तथा सामाजिक विषयों पर गीतों की रचना की है। आपकी ये गीत पुस्तिकायें भारत के सब प्रदेशों और विदेशों में भी जहां-जहां भारतीय गये हैं,—बड़ी लोकप्रिय हैं। इन गीतों ने युवा जनों की मनोवृत्ति को श्रेष्ठ और उदात्त मार्ग की ओर प्रेरित करने का ठोस कार्य किया है। आर्य समाज के प्रचार में तो आपके गीत विशेष सहायक सिद्ध हुए हैं। इनकी दो पुस्तकें "गीत भंडार" और "गीत सागर" भारत तथा विदेशों में अत्यन्त लोकप्रिय हो चुकी है। कुशल गीतकार होने के साथ साथ आप अच्छे वक्ता और प्रवचन कर्त्ता भी हैं। सतत स्वाध्याय के कारण आप आर्य सिद्धान्तों से सुपरिचित हैं।

आप स्वभाव से मिलनसार, सहानुभूतिशील, मित्र धर्म का पालन करने वाले तथा उदार और निष्कपट, सरल वृत्ति के हैं। आप कष्ट-सहिष्णु,

निर्लोभी और अपरिग्रहशील हैं। गृहस्थ आश्रम में रहते हुए आप भी सद्गृहस्थी थे।

जन्म, बचपन, शिक्षा

पं० नन्दलाल जी का जन्म अब पश्चिमी पाकिस्तान में ज़िला स्यालकोट के अन्तर्गत उग्गोकी ग्राम में सन् १६०१ में लाला सन्तराम गरोवर तथा उनकी धर्मशीला पत्नी जीवन बाई के सुयोग्य पुत्र के रूप में हुआ। परिवार की आर्थिक स्थिति सामान्य थी, पर आपके पिता बड़े पुरुषार्थी और धुन के पक्के थे। उन्होंने अपने पुत्र को तत्कालीन परिस्थिति के अनुसार पूर्ण योग्य बनाने का प्रशंसनीय प्रयत्न किया। नन्दलाल जी सामान्य स्कूली शिक्षा प्राप्त कर तत्काल कार्य क्षेत्र में आ गये। पण्डित जी इस समय आयु के ७१ वें वर्ष में हैं।

मंगलमय भगवान् पं० नन्दलाल जी वनप्रस्थी को दीर्घायुष्य और स्वास्थ्य प्रदान करें और ऐसी शक्ति से आपूरित करें जिससे वे समस्त आर्य जाति और भारतमाता की सतत और अधिकाधिक सेवा कर सकें—हमारी एक मात्र यही कामना है।

—दीनानाथ सिद्धान्तालंकार

उपदेशक, सम्पादक, लेखक एवं पत्रकार,

सी०—६१, शिवाजी पार्क,
पंजाबी बाग, नयी दिल्ली—२६

मकर संक्रान्ति सम्वत् २०२८

१४ जनवरी सन् १६७२

—०—

ओ३म्

विदेशों में वैदिक धर्म प्रचार

स्वरूप और आवश्यकता

कुछ नेताओं का अभिमत है कि जब तक स्वदेश का सुधार न हो जाय तब तक विदेश प्रचार में आर्य समाज की परिमित शक्ति का व्यय अवांछनीय है। पर प्रश्न तो यह है कि जो पचीस-तीस लाख प्रवासी हिन्दुस्तानी विदेशों और उपनिवेशों में जाकर स्थायी रुप से बस गये हैं, उनके प्रति हमारा क्या कर्त्तव्य है? यह प्रश्न ऐसा है जिसकी उपेक्षा किसी दृष्टि से उचित नहीं। स्वामी विवेकानन्द का उदाहरण लें, जिस प्रकार उन्होंने अमेरिकन जनता को आध्यात्मिकता की सुधा पिलाकर उस देश में वेदान्त का सिक्का जमाया उसी प्रकार आर्यसमाज को भी यूरोप और अमेरिका में वैदिक धर्म की पवित्र-पताका फहरा देनी चाहिये। किन्तु हमारे भाइयों को शायद यह मालूम नहीं है कि जिस समय स्वामी विवेकानन्द अमेरिका के न्यूयार्क, शिकागो, बोस्टन आदि नगरों में इने गिने मुट्ठी भर अमेरिकन नर-नारियों को वेदान्ती बनाकर अपने-मठ की स्थापना कर रहे थे, ठीक उसी समय उसी अमेरिका के दक्षिणीय भाग – डेमरारा, ट्रिनीडाड, जमैका, ग्रनेडा

आदि उपनिवेशों में हजारों प्रवासी हिन्दू स्वधर्म को तिलाञ्जलि देकर धड़ाधड़ इसाई हो रहे थे। आज उन उपनिवेशों में कोई बिरला ही शिक्षित व्यक्ति हिन्दू धर्म का अनुयायी रह गया है, अन्यथा सभी पढ़े-लिखे युवक इसाई मत की शरण में चले गये। उन अभागे हिन्दुओं पर न स्वामी विवेकानन्द की दृष्टि पड़ी और न उनके किसी भी शिष्य की दृष्टि जो दक्षिणी अमेरिका के उपनिवेशों में शर्त बन्दी मजदूरी का पट्टा लिखाकर गये थे और जो लावारिस माल की भांति ठोकरें खा रहे थे।

विदेशों और उपनिवेशों में स्थायी रूप से बसे हुए प्रवासी भारतीयों को आर्य संस्कृति के आधार और आश्रय की अत्यन्त आवश्यकता है। भारत में आर्य समाज ही एक ऐसी संस्था है, जो उनकी धार्मिक आकांक्षाओं की तृप्ति, सामाजिक त्रुटियों की पूर्ति और राष्ट्रीय भावनाओं की अभिवृद्धि कर सकती है। यद्यपि आर्य समाज ने समष्टि और सुचारु रूप से विदेशों में प्रचार कार्य नहीं किया है तो भी व्यक्तिगत हैसियत से कुछ प्रचारकों ने उपनिवेशों में पहुँचकर प्रवासी भाइयों की जो सेवा की है, उसकी सभी प्रशंसा करते हैं। प्रवासी हिन्दुओं में नव जीवन और नवजागृति उत्पन्न करने का अधिकांश श्रेय आर्य समाज को है। स्वर्गीय दीनबन्धु सी० एफ० एण्ड्रूज ने ऋषि दया-नन्द की पुण्य स्मृति पर श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए लिखा

था—"उपनिवेशों में प्रवासी भारतीयों के लिये आर्यसमाज जो कुछ कर रहा है, उससे मेरे हृदय पर गहरा प्रभाव पड़ा है। आर्यसमाज ही एक ऐसी संस्था है, जो मातृ भूमि भारत के प्रति प्रवासियों के हृदय में अनुराग पैदा करता है, राष्ट्र भाषा हिन्दी का विशेष रूप प्रचार करता है और पुरातन आर्य संस्कृति की, जिस पर प्रत्येक भारतीय का जन्म सिद्ध अधिकार है, हित की रक्षा पर खास ध्यान रखता है। दक्षिण अफ्रीका और रोडेशिया, केनिया और यूगाण्डा, जंजोवार और टंगेनिका, फिजी और मोरिशस, मलाया और सिंगापुर इत्यादि सभी उपनिवेशों में आर्यसमाज द्वारा वैदिक धर्म और आर्य सभ्यता का प्रचार और रक्षण हुआ है। कई वर्षों से मैंने अखबारों में लेख लिख-लिखकर जनता को आर्यसमाज के कार्यों से परिचित कराने का प्रयास किया है। इन लेखों का हिन्दी तथा अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद कराके भी मैंने प्रकाशित कराया है जिससे अंग्रेजी जानने वालोंके अतिरिक्त अन्य भाषा भाषियों को भी आर्य-समाज की सेवाओं की जानकारी प्राप्त हो। आर्य समाज में जीवन शक्ति और उत्साह है, अतएव मुझे विश्वास है कि उसका भविष्य उज्ज्वल एवं आशाप्रद है। भारत के जो समाज प्रवासी भारतीयों की सेवा कर सकते हैं, उनमें आर्यसमाज से बढ़कर क्रियाशील, उत्साही और शक्तिशाली दूसरा कोई नहीं है।"

विदेशों में भारतीय कैसे गये ?

संसार से गुलामी की प्रथा उठ जाने के बाद उपनिवेशों के गोरे किसानों को सस्ते और मेहनती मजदूरों की आवश्यकता पड़ी। इसलिये गुलामी का पुनर्जन्म शर्तबन्दी कुली प्रथा के रूप में हिन्दुस्तान में हुआ और यहाँ से राम-कृष्ण के वंशज औपनिवेशिक श्वेताङ्गों की गुलामी करने के लिये विदेशी सरकार द्वारा भूमण्डल के भिन्न २ भागों में भेजे जाने लगे। सन् १८३४ से एक शताब्दी तक यह गुलामी प्रथा अबाध रूप से प्रचलित रही और गत महा युद्ध के समय घोर आन्दोलन के हेतु इसका अन्त हुआ। इस प्रकार सन् १८३४ से सन् १९१८ तक नेटाल, मोरिशस, फिजी, ट्रिनीडाड, डमरेरा, ग्रनेडा आदि उपनिवेशों में जो भारतीय शर्तबन्दी का पट्टा लिखाकर गये, उनमें लगभग पचीस लाख वहीं स्थायी रूप से बस गये।

विभिन्न गांवों से बहका कर लाये गये इन शर्तबन्द मजदूरों को कलकत्ता में कुली डिपो के रखा जाता था। वहाँ ही उनके धार्मिक विश्वासों एवं सामाजिक रूढ़ियों पर असह्य आघात किया जाता था। रूढियों के गढ़—गांवों से बहका कर लाये गये इन शर्तबन्द मजदूरों को बिना जात-पात भेद के एक पंक्ति में बैठाकर जस्ते के बर्तन में दाल-भात परोसा जाता और तिस पर बाबुओं का बूट चढ़ाये चौके में

चक्कर लगाते फिरना, इन मजदूरों के धार्मिक विश्वास पर कैसा निष्ठुर प्रहार था—सामाजिक रूढ़ियों की कैसी अवहेलना थी, इसका ठीक-ठीक अनुमान वे ही कर सकते हैं, जो भारत के ग्रामीण जीवन से परिचित हैं ।

उन अभागी अबलाओं की अवस्था की कल्पना कीजिये, जो घर की चहार-दीवारी से कभी बाहर नहीं गई थीं, किन्तु जो जात के जानवरों की पंचायत से निर्वासन का दण्ड पाकर अथवा मेले-ठेले में आरकाटियों द्वारा बहकाई जाकर डिपो रूपी नरकपुरी में पहुंचाई गई थीं । जब उनको अपनी असली अवस्था का पता लगता तो दुःख से हृदय और भय से शरीर प्रकम्पित हो उठता। पर जिस तरह कसाई के घर में बंधी हुई गाय उसकी पैनी छुरी को देखकर डकारने के सिवा और कुछ नहीं कर सकती, उसी प्रकार इस कुली डिपो में सतीत्व बचना अथवा छुटकारा पाकर भाग जाना उन अबलाओं के लिये सर्वथा असंभव था ।

जिस मर्द का मन जिस औरत से लग गया, उसी से जोड़ी मिल गई, धर्म-कर्म, आचार-विचार, जातपांत और छुआछूत का एक वारगी दिवाला निकल गया । रहा-सहा धर्म–भाव उस समय कूच कर गया, जब वे जहाजों पर जानवरों की तरह लादकर उपनिवेशों को भेजे गये। हिन्दुओं ने सोचा कि धर्म गया, जात गई, फिर अब जनेऊ को क्यों बिगाड़ें ? अतएव उसे उतार कर गङ्गा सागर की गोद में

सौंप दिया। अज्ञानता ने गजब ढाया, अनाचार का मार्ग प्रशस्त हो गया।

हिन्दुत्व का नाश --

उपनिवेशों में पहुंचने पर उनका यह विश्वास और भी दृढ़ हो गया कि टापुओं में धर्म पालन और रक्षण असंभव है। जिन वस्तुओं को हिन्दु छूना भी पाप समझते थे, वे सहज ही उनके पेट में हजम होने लगीं। मुर्गे का मांस और मदिरा की प्याली सब से बड़ी नियामत समझी जाने लगी। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों की संख्या वहुत कम थी। सरकारी विधान के अनुसार सौ पुरुष पीछे चालीस स्त्रियां भर्ती करके उपनिवेशों में भेजी जाती थीं। अतएव स्त्रियों के लिये लड़ाई-झगड़े होते थे, सिर फूटते थे, सजाएं मिलती थीं, हत्याएं होती थीं और फांसियां लगती थीं। उपनिवेशों के सरकारी कानून के अनुसार हिन्दुओं का धर्म विहित विवाह नाजायज था। पुरोहित थे प्रोटेक्टर साहब और उनका आफिस था, विवाह मंडप। यहीं पर विवाहों की रजिस्ट्री हुआ करती थी। इसके बिना पत्नी पर पति का कोई अधिकार नहीं होता या।

हिन्दू अपने त्यौहारों को भी भूल बैठे। होली, दीवाली रामनवमी और कृष्णाष्टमी आदि त्योहार विस्मृति की वारिधि में डूब गये। कौन कब आता है, और कव

जाता है—इसकी न किसी को जरूरत थी और न परवाह। हिन्दुओं के लिये सबसे बड़ा त्योहार मुहर्रम बन गया। हिन्दुओं के घर ताजिये बनते, उनकी स्त्रियां मर्सिया गातीं और इमाम हुसैन-हुसैन साहब पर शीरनी, पञ्जे और मलीदे आदि चढ़ातीं। यही हिन्दुओं का प्रमुख त्योहार माना जाता और इसी अवसर पर कोठियों में कुलियों को भी छुट्टी मिलती थी। सबसे अधिक मजा तो यह कि ताजिये के दायें-बायें या आगे पीछे का बखेड़ा उठाकर हिन्दू लोग आपस में लड़ पड़ते थे और हर साल अनेक हिन्दुओं के सिर फूटते, टांगें टूटतीं और मौत भी हो जाती।

हिन्दुओं में मृतक-दाह के स्थान पर मुर्दे जमीन में गाड़ने और कब्रों पर फूल पत्तियां चढ़ाने की प्रथा भी प्रचलित हो गई। शनैः शनैः हिन्दुत्व का लोप होता ही गया। यद्यपि ब्राह्मणों की भर्ती वर्जित थी, तो भी कुछ नामधारी ब्राह्मण पापी पेट की आग बुझाने के लिये नाम और जात बदलकर उपनिवेशों में पहुंच ही तो गये। वे भी हिन्दुओं को अपने पुराने पथ की ओर प्रेरित करने में असमर्थ सिद्ध हुए। पर उन्होंने हनुमान चालीसा, दानलीला, अर्जुनगीता, सूर्य पुराण और सत्य नारायण की कथा के प्रताप से यत्र तत्र हिन्दुत्व का चिन्ह बनाये रखा।

प्रवासी हिन्दुओं की इस दुरवस्था से इसाई और मुसलमानों ने खूब लाभ उठाया। हिन्दू युवकों को हिन्दुत्व से

ऐसी घृणा हुई कि वे धड़ाधड़ इसाई और मुसलमान बनते जाते थे। ऐसा प्रतीत होने लगा था कि निकट भविष्य में शर्तबंदी में गए हिंदुओं के वंशजों में हिन्दुत्व का चिन्ह ही मिट जाएगा, ठीक उसी समय उपनिवेशों में आर्य समाज की ओर से वैदिक धर्म का संदेश पहुंच गया और हिंदुओं के अस्तित्व की रक्षा हो गई।

मोरिशस—

मोरिशस-द्वीप हिन्द-महासागर में स्थित हैं। भारत की दृष्टि में मोरिशस एक अत्यन्य उपयोगी उपनिवेश है। इसके दो कारण हैं— एक तो यह कि इस द्वीप की जन-संख्या में ७० प्रतिशत भारतवासो है और दूसरा यह कि संसार से गुलामी की प्रथा उठ जाने पर सबसे पहले भारत वासी सन् १८३४ में अर्द्ध गुलाम स्वरूप इसी द्वीप में भेजे गये थे। पुराने प्रवासी भारतीय अपनी कुछ रूढ़ियों से चिपटे हुए थे।

वहां की लगभग चार लाख की जन संख्या में तीन लाख हिन्दुस्तानी हैं। रोमन कैथोलिक मिश्नरियों के प्रयत्न से हिन्दू युवक धड़ाधड़ इसाई होने लगे। कुछ ही काल में ११६१७ (ग्यारह हजार छः सौ सत्रह) हिन्दुओं ने इसाई मत स्वीकृत कर लिया। जो भारतीय मोरिशस में जन्मे हैं वह 'इण्डो-मोरिशियन्स' कहलाते हैं। ९० फी सदी इण्डो

मोरिशियन्स 'किरोल' भाषा, जो एक बिगड़ी हुई फ्रेन्च जबान है, बोलते हैं। यही इनकी आम भाषा बन गई है। हिन्दी इनके लिए विदेशी भाषा बन रही थी। वहां के जन्मे हुए हिन्दू मोरिशस को अपना देश और भारत को विदेश मानने लगे। उनमें जो थोड़े बहुत पढ़ लिख गये, वह प्रायः कहा करतेः— 'यह विदेशी (हिन्दुस्तानी) यहां आकर हमारे देश (मोरिशस) को भारी हानि पहुँचाते हैं, व्यापार आदि के द्वारा यहां का धन खींचकर भारत ले जाते हैं।''

सन् १९०३ में आर्य समाज के पण्डित रामफल शर्मा भारत से मोरिशस पहुंचे। उन्होंने वहां से विदा होते समय अपने सारे ग्रंथ पं० जगन्नाथ जी को अर्पण कर दिये। पं० जगन्नाथ जी 'नमस्ते' कहकर पौराणिक पंडितों को ललकारा करते। श्री खेमलाल के प्रयत्न से समाज का प्रचार होने लगा।

सन् १९०७ में बैरिस्टर मणीलाल मोरिशस पहुंचे। हिन्दुओं की अधम अवस्था देखकर उनका अन्तःकरण तिलमिला उठा। सन् १९०८ में उनका 'हिन्दुस्तानी' अखबार प्रकाशित हुआ। जनता में जागृति फैलने लगी। सुधार की आवश्यकता प्रतीत होने लगी। डाक्टर साहब के मकान के एक कमरे में आर्य समाज की बैठक होती और भावी कार्यक्रम पर विचार किया जाता। आखिर

१७ अप्रैल सन् १९१० में डाक्टर मणीलाल के प्रोत्साहन और प्रेरणा से मोरिशस की राजधानी 'पोर्टलुईस' में प्रथम आर्य समाज की विधिपूर्वक स्थापना हो गयी। श्री मणीलाल जब भारत वापस गये तो उन्होंने "हिन्दुस्तानी प्रेस" आर्य समाज को प्रदान कर दिया।

सन् १९१२ के प्रारंभ में स्वर्गीय स्वामी मङ्गलानन्द पुरी मोरिशस गये। स्वामी जी को वहां के हिन्दुओं की अधोगति पर बड़ा ही मनस्ताप हुआ। उस समय श्री लक्ष्मण पंडा भी आर्य समाज के प्रचार कार्य में उत्साह से संलग्न थे। इसके बाद ही डाक्टर चिरंजीव भारद्वाज जी अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुमङ्गली देवी के साथ वहां पहुंच गये। डाक्टर साहब जैसे प्रकाण्ड पंडित के प्रताप से मोरिशस में आर्य समाज का सिक्का जम गया। पुरी जी स्वदेश लौट आये और डाक्टर साहब ने आर्य समाज का नेतृत्व ग्रहण किया।

डाक्टर भारद्वाज की वाणी और क्रिया से मोरिशस द्वीप में सर्वत्र वैदिक धर्म का सन्देश पहुंच गया। श्री माधवलाल हरिवंश और श्री वी० शिवसरन पोर्टलुईस में लेखबद्ध प्रचार कर रहे थे। वाकुआ में श्रीरामेश्वर पतारू, श्री भोला मास्टर, श्री मोती मास्टर प्रभृति समाज की शरण में आ गये थे। संस्कृत के विद्वान् होने के कारण डाक्टर भारद्वाज का वहां के नामधारी ब्राह्मणों पर भी

गहरा प्रभाव पड़ा था। श्रीमती सुमङ्गली देवी के भाषणों ने वहां की जनता में अद्भुत जागरण उत्पन्न किया।

सन् १९१३ में डाक्टर भारद्वाज ने मोरिशस में 'आर्य परोपकारिणी सभा' की स्थापना की। उसके लिए चन्दा करके आपने एक छोटा सा मकान भी खरीदा। उसी साल डाक्टर भारद्वाज की उपस्थिति में ही श्री स्वामी स्वतंत्रानन्द जी का मोरिशस में शुभागमन हुआ। स्वामी जी को आर्य समाज की बागडोर थमाकर डाक्टर साहब मोरिशस से वापस आ गये। इसके बाद पं० काशीनाथ और महता जैमिनी जी वहां गये। कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं ने पोर्टलुईस में दयानन्द धर्मशाला व आर्य वैदिक विद्यालय स्थापित किया।

मोरिशस में आर्य समाज के प्रताप से एक नया युग प्रारंभ हो गया। समाजों और संस्थाओं के सहारे आर्य समाज की शक्ति और प्रभाव का थाह लगाना कठिन है किन्तु मोरिशस की आधुनिक जागृति का सारा श्रेय आर्य समाज को ही है।

नेटाल

दक्षिण अफ्रीका में चार प्रदेश हैं—नेटाल, ट्रांसवाल, केप और औरञ्ज फ्रीस्टेट। एक करोड़ की आबादी में दो लाख हिन्दुस्तानी हैं, जिनमें डेढ़ लाख हिन्दू हैं। सन् १८६० में पहले पहल भारतीयों का आगमन नेटाल में हुआ शर्त-

बन्द मजदूरों की हैसियत से। इस समय भी दो लाख भारतीयों में डेढ़ लाख से कुछ अधिक नेटाल में हैं। कुली प्रथा के शिकार होने से हर दृष्टि से हिन्दुत्व का ह्रास होता गया। हिंन्दुओं का सब कुछ छूट गया पर रूढ़ियों ने उनका पिण्ड नहीं छोड़ा। फल यह हुआ कि वहां की नई पीढ़ी हिन्दु धर्म से विरक्त होकर सच्चे धर्म की खोज में भटकने लगी। हिन्दुओं की प्रचलित रूढ़ियों से उनकी घृणा बढ़ने लगी। हिन्दुओं की डांवाडोल स्थिति से इसाइयों ने यथेष्ट लाभ उठाने की चेष्टा की। हिन्दु युवक धीरे धीरे इसाई धर्म की शरण में जाने लगे।

सन् १९०५ में भाई परमानंद जी को वहां बुलाया गया। इससे हिन्दुओं में नवीन जीवन और जागृति का संचार हो गया। भाई जी ने अपने व्याख्यानों से उनकी धार्मिक प्रवृत्ति कोऔर भी तीव्रकरदिया। वे एक ऐसे धर्मोपदेशक की खोज में प्रवृत्त हुए,जो उनको वैदिक धर्म का गूढ़-रहस्य बताकर कल्याण का मार्ग दिखा दे। सौभाग्य से स्वामी शंकरानंद जी मिल गये जो उस समय लंदन में थे। सन् १९०८ में हिन्दुओं के विशेष आग्रह से स्वामी जी नेटाल पधारे। उनका आगमन हिन्दुओं के लिए बड़ा हितकर सिद्ध हुआ। उन्होंने ४ वर्ष तक प्रचार कार्य किया। स्वामी जी के प्रयत्नों से नेटाल के हिन्दुओं के लिए एक नवीन युग का आरम्भ हुआ। सन् १९०८ से १९१२ तक स्वामी शंकरानन्द

ने दक्षिण आफ्रिका में वैदिक धर्म का प्रचार किया।

सन् १९१३ में स्वामी मंगलानंद जी पुरी भी देशाटन करते सुए ट्रांसवाल पहुंच गये। आप दक्षिण अफ्रिका में लगभग छः महीने और ट्रांसवाल एवं नेटाल प्रदेश में यदा-कदा प्रचार भी करते रहे। स्वामी शंकरानन्द जी के वहां से बिदा होने के पांच मास पूर्व ही स्वामी भवानी दयाल दक्षिग अफ्रिका पहुंच गये और आर्यसमाज के प्रचार का भार उनके कंधों पर आ पड़ा। एक ओर उन्होंने वैदिक धर्म प्रचार आरम्भ किया और दूसरी ओर हिन्दी भाषा का भी। श्री आर० जी० भल्ला ने "धर्मवीर" नामक साप्ताहिक पत्र डरबान से स्वामी जी के सम्पादन में निकाला।

सन् १९२१ में गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक पं० ईश्वर-दत्त जी विद्यालङ्कार ने अपने सहकारी लाला सांईदास (पश्चात् श्री सत्यब्रतजी) के साथ दक्षिणी अफ्रिका में पर्य-टन और प्रचार किया। आप शारीरिक व्यायाम का भी प्रदर्शन करते थे किन्तु दक्षिण अफ्रीका में यह प्रदर्शन स्थ-गित रहा। नेटाल के प्रायः सभी नगरों और गांवों में आप के व्याख्यान हुए। उसी समय आर्यसमाज के वयोवृद्ध भज-नीक ठाकुर प्रवीण सिंह भी नेटाल पधारे और भजनों द्वारा वैदिक प्रचार करते रहे।

स्वामी भवानी दयाल जी ने सन् १९२२ में हिन्दी तथा अंग्रेजी में "हिन्दी" नामक साप्ताहिक पत्र निकालना

आरम्भ किया। वैदिक धर्म का प्रचार करना भी इस पत्र का उद्देश्य था। सन् १९२५ में ऋषि दयानन्द की जन्म शताब्दी डरबन नगर में मनाई गई और नेटाल प्रादेशिक आर्य-प्रतिनिधि सभा की भी स्थापना हुई, इसके बाद डा० भगत-राम सहगल और होशियारपुर के डी० ए० वी० कालेज के प्रोफेसर रलाराम दक्षिण अफ्रिका में प्रचार के लिए गये। सन् १९३४ में प० आनन्द प्रियजी बड़ौदे की अपने आर्य कन्या महाविद्यालय की छात्राओं के साथ दक्षिण अफीका में उपस्थित हुए। इन कन्याओं के व्यायाम प्रदर्शन से वहां की आर्य जनता को अभिमान से मस्तक उठाने का अवसर मिला। सन् १९३७ में पं० यशपालजी, १९३८ में लाहौर के ब्राह्म महाविद्यालय के आचार्य पं० ऋषिरामजी बी० ए० भी वहां आये। पिछले लगभग ४० वर्षों में दक्षिण अफ्रीका प्रवासी भारतीयों में वैदिक धर्म का यथेष्ट प्रचार हुआ है।

फिजी—प्रशांत महासागर में अस्ट्रेलिया से पूर्व और न्यूजीलैण्ड से उत्तर दिशा में फिजी-द्वीप-समूह है, जो लगभग २५० ग्रामों में विभक्त है। लगभग ८० द्वीपों में मनुष्य की बस्ती है, शेष उजाड़ पड़ा है। फिजी का क्षेत्रफल ७०८३ वर्ग मील है। सन् १८७९ में शर्तबन्द भारतीय मजदूरों का फिजी में प्रवेश हुआ और १९१६ तक यह

सिलसिला जारी रहा । सन् १६३२ तक भारतीयों की संख्या ७६,७२२ तक पहुंच गई थी । इनमें ८० प्रतिशत से अधिक हिन्दू हैं ।

शर्तबन्दी प्रथा की बुराइयों के सम्बन्ध में हम जो कुछ पहले लिख चुके हैं वह स्थिति यहां भी अत्यन्त भयंकर थी । परिणाम यह हुआ कि इसाईयों ने इस परिस्थिति से लाभ उठाने में कोई कोर-कसर नहीं की ।

यहाँ सबसे पहले स्वामी भवानी दयाल जी की प्रेरणा से स्वामी राम मनोहरानंद जी सन् १६१३ में फिजी पहुंच गये । आपने अपने धर्मोपदेश से प्रवासी भाइयों का ध्यान आर्य समाज की ओर आकर्षित किया जिस-से हिन्दुओं को भारी प्रोत्साहन और सहारा मिला । स्थान-स्थान पर आर्य समाज खुल गये, प्रवासी युवक वैदिक धर्म के झंडे के नीचे एकत्र होने लगे और हिन्दुओं में अभूतपूर्व जागृतिउत्पन्न हो गयी । इसके बाद १६१६ में गोपेन्द्र जी ने फिजी द्वीप में जा कर बड़ा कार्य किया । गोपेन्द्रजी के ही उद्योग से पं० श्री कृष्ण शर्मा आर्य मिश्नरी, पं० अमी चन्द्र विद्यालंकार, ठाकुर कुन्दन सिंह, श्री सरदार सिंह, श्री महता जैमिनी जी आदि ने भी अपने उपदेशों से प्रवासी भारतीयों को लाभ पहुंचाया। इस समय फिजी द्वीप के सभी नगरों में आर्य समाज स्थापित है । इस समय आर्य प्रतिनिधि सभा के पास लग भग एक लाख रुपये की सम्पत्ति

है। आर्य समाज के उद्योग से स्त्री शिक्षा का यथेष्ट विस्तार हुआ। फिजी में अब आर्य समाज को शक्ति दृढ़ हो गयी है।

बृटिश गायना--

दक्षिणी अमेरिका के निकट यह उपनिवेश है—डेमारा, इसक्वाबो एवं बेरवाइस टापू बृटिश गायना के नाम से प्रसिद्ध हैं। सन् १८३३ में गुलामी की प्रथा नष्ट होने के बाद ही वहाँ शर्तबंद भारतीय मजदूरों का जाना प्रारम्भ हुआ और इस समय वहाँ प्रवासी भारतीय मजदूरों की संख्या डेढ़ लाख के करीब पहुंच चुकी है।

यहां के हिन्दुओं की धार्मिक और सामाजिक अवस्था ऐसी करुणाजनक थी कि उसकी कल्पना मात्र से रोमाञ्च हो आता है। जब भाई परमानंदजी पहले पहल डेमरारा की राजधानी जार्जटाउन में पहुंचे तो एक हब्शी पादरी ने उनको भारतीयों की बस्ती में पहुंचाया।

भाईजी ने ही बृटिश गायना के प्रवासी भारतीयों को पहले पहल वैदिक धर्म का संदेश सुनाया। पढ़े-लिखे लोग सबके सब ईसाई हो गए थे। जब से वहां आर्य समाज का प्रचार आरम्भ हुआ, प्रवासी हिन्दुओं में नवजीवन का प्रादुर्भाव हो आया। पं० अयोध्याप्रसाद जी, महता जैमिनी जी, पं० चन्द्रशेखर जी, पं० लक्ष्मणप्रसाद जी, पं० रामजी लाल शर्मा और पं० गिरजादयाल—ये सब महानुभाव

प्रचार-कार्य करते रहे।

ट्रिनीडाड–

बृटिश गायना के पड़ोस में ही ट्रिनीडाड नामक उपनिवेश है। ट्रिनीडाड और टोबागो में प्रवासी भारतीयों की संख्या लगभग डेढ़ लाख है। सन् १८४५ में शर्तबंद भारतीय मजदूरों का इस देश में प्रथम प्रवेश हुआ था। बृटिश गायना की भांति यहां के हिन्दू युवकों को भी अपने धर्म का ज्ञान बिल्कुल नहीं रहा, अपनी संस्कृति से सर्वथा अनभिज्ञ हो गये। सन् १९२८ में महता जैमिनी जी ट्रिनीडाड गये और आपने वहां के हिन्दुओं को वैदिक धर्म का संदेश सुनाया। आपके व्याख्यानों की वहां धूम मच गई। आर्यत्व का नवीन रूप देखकर युवकों के आश्चर्य की सीमा नहीं रही। इसके बाद प० गिरजादयाल जी तथा सन् १९३४ में आर्य समाज के विद्वान् पं० अयोध्याप्रसादजी दैवयोग से वहां जा पहुंचे। आपने बड़ी लगन और उत्साह से वैदिक धर्म का प्रचार किया। लगभग डेढ़ हजार मनुष्य आर्य समाज में प्रविष्ट हुए। कई नगरों में आर्य समाज की स्थापना हुई।

इसके बाद सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा ने प्रचार के लिये दो और उपदेशक भेजे—एक तो पं० सत्याचरण शास्त्री एम० ए० और दूसरे पं० भास्करानन्द जी एम०ए०। इनके जाने से आर्य समाज का बल और प्रभाव और भी बढ़ गया।

डच गायना—

सन् १८७३ में भारतीय मजदूर पहले पहल डच गायना गये और सन् १८१२ तक यह सिलसिला जारी रहा। इस प्रदेश के प्रवासी हिन्दुओं की हालत भी अच्छी नहीं थी। लाखों हिन्दु विधर्मी हो गये थे। सन् १९२६ में सुरीनाम के कुछ हिन्दुओं ने महर्षि दयानन्द कृत सत्यार्थ प्रकाश इत्यादि ग्रंथ मंगाकर पढ़ना शुरू किया, इससे उनकी आंखें खुलने लगीं और समाज सुधार की इच्छा बलवती होती गई। उसी काल में श्री शीतल प्रसाद दुबे ने वहां के कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं के सहयोग से "भारतोदय" नाम की एक सभा बनाई। श्री लक्ष्मणसिंह जी की विधवा पत्नी ने अपने पति की स्मृति में "श्री लक्ष्मणसिंह धर्मशाला" डच गायना के मुख्य नगर 'पारामारिवो' में स्थापित की। सन् १९२९ में डमरारा से महता जैमिनी जी वहां जा पहुंचे। एक सप्ताह में कुछ व्याख्यान देकर बृटिश गायना लौट गये। फिर ट्रिनीडाड से पं० अयोध्या प्रसादजी वहां गये तो आर्य समाज की धूम मच गई। डच गायना की राजधानी पारामारिबो में नियमपूर्वक समाज की स्थापना हुई। इसके बाद पं० सत्याचरण शास्त्री ने भी वहां पहुंचकर यथेष्ट प्रचार किया। इस ससय डच गायना में अनेक प्रवासो भाई वैदिक धर्म प्रचार का कार्य कर रहे हैं।

केनिया—

इस प्रदेश से भारतीयों का बहुत पुराना सम्बन्ध है। ईस्वी सन् से पूर्वकाल में वहां भारीतयों के जाने और व्यापार करने का इतिहास मिलता है। सन् १८८५ में जब इम्पिरियल ईस्ट अफ्रीका कम्पनी से ब्रिटिश सरकार ने केनिया का शासन सूत्र ग्रहण किया तो केनिया-यूगाण्ड़ा-रेल बनाने का काम शुरू किया गया। स्थानीय मजदूरों से अभीष्ट की सिद्धि नहीं हो सकी। आखिर भारत सरकार को मजदूर देने का आदेश मिला और पंजाब के मजदूरों ने ही नाना प्रकार के कष्ट झेलकर इस काम को पूरा किया।

केनिया में शिक्षित हिन्दुओं के लिए अच्छा क्षेत्र था। उन्हें नौकरी-चाकरी प्राप्त करने में कोई कठिनाई नहीं होती थी। वहां के सरकारी और खानगी दफ्तरों में हिन्दू युवकों की एक अच्छी संख्या थी। इन शिक्षित हिन्दू युवकों के साथ आर्यसमाज का संदेश भी वहां पहुंचा। सबसे पहले केनिया की राजधानी नैरोबी नगर में सन् १९०३ की ३ अगस्त को आर्य समाज की स्थापना हुई। यहाँ आर्य समाज का ऐसा सुन्दर, शोभाप्रद और भव्य मंदिर है, जिसके जोड़े का मंदिर अफ्रीका महाद्वीप तो क्या विदेशों में अन्यत्र कहीं भी नहीं है। इस मंदिर के निर्माण में लाखों रुपये लगे हैं। आर्यसमाज ने अलग मकान बनवा-

कर उसमें कन्या पाठशाला स्थापना की है जो स्त्री शिक्षा की दृष्टि से नैरोबी में सर्वोत्तम संस्था है, इसके संचालन में बारह हजार रुपया वार्षिक व्यय होता है। यहां आर्य समाज की कई संस्थाएं हैं। पूर्वीय अफ्रीका की आर्य प्रतिनिधि सभा का मुख्य कार्यालय भी इसी समाज में है।

भारतवर्ष से वहां अनेक उपदेशक जा चुके हैं और प्राय: जाते ही रहते हैं जिनमें स्वामी स्वतंत्रानन्द, पं० पूर्णानन्द, प० महाराणी शंकर, प० बालकृष्ण शर्मा, पं० मणिशंकर, पं० सत्यपाल सिद्धांतालंवर, आचार्य रामदेव जी, महता जैमिनि जी, पं० ईश्वरदत्त विद्यालंकार, पं० चमूपति जी एम० ए०, पं० बुद्ध देव जी विद्यालङ्कार, पं० सत्यव्रत जी सिद्धांतालंकार, ठाकुर प्रवीणसिंह, डाक्टर भगत राम, पं० रविदत्त, पं० माथुर शर्मा, पं० हरिशंकर विद्यार्थी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

केनिया में नैरोबी के बाद किसुमू आर्य समाज का दूसरा दर्जा है। सन् १९१० में श्री मथुरादास जी और पं० पूर्णानन्द जी के उद्योग से इस समाज की स्थापना हुई थी। किसुमू आर्य समाज का मन्दिर लगभग पचीस हजार रुपये की लागत का है। समाज ने लगभग चालीस हजार रुपये लगाकर आर्य कन्या पाठशाला के लिये मकान बनवाया है जिसमें अध्यापिकाओं के रहने के लिये भी व्यवस्था है। ससाज ने "श्रद्धानन्द आर्य पथिकाश्रम" भी निर्माण

कराया है जिसकी लागत लगभग सत्ताइस हजार रुपये है। इस समाज के अन्तर्गत स्त्री समाज ग्रौर वाचनालय भी है।

केनिया में तीसरा उल्लेखनीय मोम्बासा का ग्रार्य समाज है। मोम्बासा केनिया का मुख्य बन्दरगाह है। आज से पाव सदी पहले मोम्बासा में आर्य समाज की स्थापना हुई थी। हाल ही में भव्य ग्रार्य मन्दिर भी बन गया है। केनिया में प्रवेश और प्रचार करने वाले ग्रार्योपदेशकों का मोम्वासा ग्रार्य समाज ही सर्व प्रथम ग्रागत-स्वागत करने का श्रेय प्राप्त करता है। केनिया में नकुरू ग्रादि स्थान ऐसे हैं जहां ग्रार्य समाज तो नहीं है किन्तु ग्रार्य भाई ग्रवश्य रहते हैं ग्रौर भारतीय उपदेशकों से प्रचार कराते रहते हैं।

यूगाराडा—

केनिया से सटा हुग्रा यूगाण्डा प्रदेश है। यहां लगभग पन्द्रह हजार भारतीयों की ग्राबादी है। यूगाण्डा प्रदेश में कम्पाला नामक एक नगर है जो व्यापार के विचार से बढ़ा महत्वपूर्ण है। यहां सन् १९०८ में ही पं० पूर्णानन्द जी ने आर्य समाज की स्थापना की थी। सन् १९२९ में कम्पाला में ग्रार्य समाज मन्दिर का निर्माण हुआ। समाज में एक वाघनालय भी हैं।

यूगाण्डा में दूसरा ग्रार्य समाज जिञ्जा (Jinja) में है। तीसरा आर्य समाज मबेल (Mbale) में है। इसकी स्थापना

सन् १६२८ में हुई थी। समाज के आधीन एक आर्य पाठशाला भी है। यूगाण्डा प्रदेश में आर्य समाज का प्रचार और बिस्तार का अधिकांश श्रेय स्व० सेठनानजी कालीदास महता को था। वे करोड़ों का कारबार करते थे।

आर्य समाज के प्रसिद्ध प्रचारक पं० पूर्णानन्दजी, स्वामी स्वतन्त्रानन्द जी, आचार्य रामदेव जी, पं० ईश्वरदत्त विद्यालंकार, पं० बालकृष्ण शर्मा, पं० मणिशंकर, डाक्टर भगतराम जी, महता जैमिनी जी, श्री हरिशंकर विद्यार्थी, ठाकुर प्रवीणसिंह, प० सत्यपाल सिद्धान्तालङ्कार आदि ने यूगाण्डा के प्रवासी भाइयों में वैदिक धर्म का यथा समय प्रचार कर आर्यत्व का गौरव बढ़ाया है।

जंजिबार--

मोम्बासा से बारह घण्टे में स्टीमर जंजिबार पहुंच जाता है। यह एक छोटा सा द्वीप है जो लौंग की खेती और कारोबार के कारण भारत में बहुत प्रसिद्ध है। यहां आर्यसमाज की स्थापना सन् १६०७ में हुई थी। तत्कालीन आर्य बन्धुओं ने इसकी स्थापना में पर्याप्त परिश्रम किया था। इस समय जंजिबार में आर्य समाज एक लोकप्रिय संस्था है। जिस जगह पर गुलामों का बाजार लगता था; हबशी दासों की खरीद और बिक्री होती थी, अवज्ञा करने पर उनका वध किया जाता था, ठीक उसी जमीन पर आर्य समाज मन्दिर बना है; वेद की ऋचाएं पढ़ी जाती

हैं; यज्ञ होते हैं; मानसिक गुलामी के विरुद्ध क्रांति की लपटें निकलती हैं और स्वतन्त्रता की भावना का प्रचार होता है। कैसा अद्भुत संयोग है! इस जमीन पर जंजिबार के सुलतान की उदारता से ही आर्य मन्दिर का निर्माण हो सका है। जंजिबार का आर्य मन्दिर दुमंजिला है। प्रचारकों और अभ्यागतों के ठहरने के लिये अतिथिशाला भी है। समाज का वाचनालय भी लोकोपयोगी सिद्ध हो रहा है किन्तु समाज का सबसे महत्वपूर्ण कार्य है—आर्य कन्या पाठशाला का संचालन। इसमें बिना किसी भेदभाव के सभी सम्प्रदाय की लड़कियां दाखिल हो सकती हैं और यहां की शिक्षा प्रणाली से लाभ उठा सकती हैं। यद्यपि खोजा लोगों की अपनी अलग कन्या पाठशालाएं हैं तो भी अनेक खोजा लड़कियां इस आर्य कन्या पाठशाला में पढ़ती हैं।

भारत से जितने भी उपदेशक केनिया और यूगाण्डा में प्रचारार्थ गये उनके उपदेशों से जंजिबार निवासी वंचित नहीं रहने पाये।

टंगेनिका

जंजिबार के समीप ही टंगेनिका नामक प्रदेश है। पूर्वकाल में यह जर्मनी का उपनिवेश था किन्तु महायुद्ध के बाद राष्ट्र संघ ने इसका शासन सूत्र ब्रिटिश सरकार को सौंप दिया। इस प्रदेश की राजधानी, सबसे बड़ा शहर

और बन्दरगाह का नाम दारस्सलाम है। सन् १९१६ में दारस्सलाम नगर में आर्य ससाज का विधिपूर्वक प्रतिष्ठान हुआ। स्वर्गस्थ श्री करसनदास द्वारकादास ने इस समाज की स्थापना और उत्तरोत्तर उन्नति में विशेष रूप से योग दिया था। यहां का समाज मन्दिर भव्य और आकर्षक है; उसके निर्माण में तीस हजार रुपये के लगभग खर्च हुए हैं। मन्दिर दुमंजिला है। समाज की ओर से संचालित "देव-कुंरव आर्य कन्या पाठशाला" प्रवासी आर्यों के लिये गौरव स्तम्भ है।

टंगेनिका प्रदेश में दारस्सलाम के अतिरिक्त टबोरा और म्वांजा (Mwanza) शहर में भी आर्य समाजें हैं। इनके नियमित अधिवेशन होते हैं और इनके द्वारा भारतीय जनता में वैदिक धर्म का निरन्तर प्रचार होता रहता है।

पोर्तुगीज पूर्व अफ्रीका

टंगेनिका की दक्षिणीय सरहद पर पोर्तुगीज पूर्व अफ्रीका है। लगभग पौन सदी पहले भारतीयों ने इस प्रदेश में पहले पहल प्रवेश किया था। उन्होंने केवल शहरों और गावों में ही डेरा नहीं जमाया प्रत्युत ऐसे बीहड़ वनों में भी अपने कारोबार का जाल फैलाया, जहां और किसी में जाने की हिम्मत नहीं थी। वे वहां स्थायी रूप से बसने के विचार से नहीं गये थे किन्तु धन कमाकर स्वदेश लौट आना ही उनका एक मात्र लक्ष्य था। इसलिये स्त्री-बच्चों

को साथ ले जाना उनको उचित नहीं जचा। नैतिक दृष्टि से इसका बड़ा बुरा परिणाम हुआ। अनेक प्रवासी भाइयों ने हबशी औरतों से नाजायज सम्बन्ध कर लिया। बड़े-बड़े सेठ साहुकार इस पाप-पङ्क में फंस गये, यहां तक कि जो महज नौकरी करने आये थे—भारत से दो चार साल के लिये शर्त बन्दी लिखाकर, उनके गले भी हबशी औरत मढ़ दी जाती थी। इससे सेठ को बहुत फायदा होता था। एक तो नौकर को काम-वासना की तृप्ति के लिये इधर उधर बदमाशी की फिराक में घूमने की जरूरत नहीं पड़ती थी और दूसरे थोड़े दाम में सदा के लिये एक दासी मिल जाती थी, जो घर में झाड़ू लगाती, बर्तन मांजती, कपड़े भोंचती और दुकान में भी काम करती। इस प्रकार दिन भर सेठ की सेवा करती और रात में उसके नौकर की काम-वासना की तृप्ति भी। उन्होंने अपने वर्णसंकर बच्चों को इसाई और मुसलमानों को सौंपा। यह रिवाज चल पड़ा कि जहां हिन्दू के घर में वर्णसंकर बच्चा पैदा हुआ, फौरन उसका नाम मुसलमानी नाम धर दिया गया और कुछ बड़े होने पर बलात् उसको मसजिद अथवा गिरजे में पहुंचा दिया गया। आज ये वर्णसंकर अपने मुसलमानी नाम के साथ हिन्दु पिता का नाम जोड़कर हिन्दुओं की अदूरदर्शिता, संकीर्णता और हृदय हीनता का खुले आम डंका पीट रहे हैं। पोर्तुगीज पूर्व अफ्रीका में सात आठ हजार ऐसे वर्ण-

संकर मिलेंगे।

यद्यपि इस प्रदेश के एक ओर दक्षिणीय अफ्रीका में और दूसरी ओर ब्रिटिश पूर्वीय अफ्रीका में उन्नीसवीं सदी के प्रारम्भ से ही वैदिक धर्म का प्रचार हो रहा था किन्तु दुर्भाग्यवश उसके प्रभाव से यह प्रदेश सर्वथा वञ्चित रहा। यहां के कुछ प्रगतिशाली व्यक्तियों को यह स्थिति खटक रही थी। निदान सन् १९३२ में पोर्तुगीज पूर्व अफ्रीका की राजधानी लोरेन्सो मार्क्विस में भारत समाज को स्थापना हुई और सरकारी नियमानुसार रजिस्ट्री भी हो गई। भारत समाज ने आर्य समाज के सिद्धान्त, नियम और उद्देश्य को अपनाया। सन् १९३३ में भारत समाज का प्रथम वार्षिकोत्सव हुआ। सन् १९३७ में वेद मन्दिर का शिलान्यास किया गया। इस वेद मन्दिर के निर्माण में पचास हजार रुपये खर्च हुए। यह मन्दिर अत्यन्त सुन्दर है। मन्दिर के अन्तर्गत भारतीय पाठशाला है जिसमें बालकों को हिन्दी, गुजराती और पोर्तुगीज भाषा की शिक्षा दी जाती है। वेद मन्दिर में पुस्तकालय और वाचनालय भी हैं। स्वयं सेवक दल और व्यायामशाला भी इसके विशेष अङ्ग हैं। भारत समाज द्वारा अब तक अनेक वर्णसंकर बच्चों की शुद्धि हो चुकी है। वेद मन्दिर में अतिथिशाला भी है।

बैरा नगर में, जो रोडेशिया आने जाने का मुख्य

बन्दरगाह है, कुछ उत्साही प्रवासी भाइयों के उद्योग से आर्य समाज कायम हुआ और कुछ कार्य भी हुआ। परन्तु बाद को वह शिथिल हो गया।

बर्मा—

कुछ वर्ष पूर्व ब्रह्मदेश हमारी मातृ-भूमि का राजनीतिक दृष्टिकोण से एक अङ्ग माना जाता था किन्तु बृटिश सरकार ने अपने भविष्य के विचार से उसको भारत से पृथक् करना ही श्रेयस्कर समझा, अतएव बर्मा एक स्वतन्त्र देश बन गया। बर्मा के रंगून, पेगो, मांडले, मीनवा शीबो, हुपन, मचीना, थियाजी, मीमो, लाशू, निमटूं,कल्ल और यम्बू नामक तेरह शहरों और कस्बों में आर्य समाज स्थापित हुए। इन समाजों के संगठन और एकत्रीकरण के अभिप्राय से आर्य प्रतिनिधि सभा भी कायम की गई। आर्य समाज के नियम ब्राह्मी भाषा में अनूदित हुए और पं० चुन्नीलाल ने सत्यार्थ प्रकाश का ब्राह्मी भाषा में उल्था किया। रंगून में दो आर्य समाज मन्दिर थे और एक दयानन्द वैदिक स्कूल।

मांडले में भी शानदार आर्य समाज था। इस समाज नें जनता की स्तुत्य सेवाएं की थीं। रंगून से इसका कार्य-क्षेत्र कुछ कम विस्तृत नहीं था। मांडले आर्यसमाज के अधीन एक आर्य अनाथालय, हाई स्कूल, रात्रि पाठशाला और कन्या विद्यालय का संचालन भी समाज द्वारा हो

रहा था ।

जापान के आक्रमण और अधिकार के बाद बर्मा से भारतीयों का अस्तित्व ही लुप्त हो गया। वहां से कोई पांच लाख से अधिक भारतीय स्वदेश भाग आये थे। उनका सर्वस्व नष्ट हो गया था और उनके साथ ही आर्य समाज का भी नाम-निशान मिट गया।

श्याम (थाईलैण्ड)—

ब्रह्म देश की सीमा पर श्याम देश है जो आज कल थाईलैण्ड के नाम से भी प्रख्यात हो रहा है। इसका भारत से धार्मिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध बहुत पुराना है।

श्याम में अब कई हजार भारतीय बसते हैं, उनमें कुछ तो व्यापार करते हैं और कुछ दरबानी या मजदूरी। व्यापारियों में कुछ दूकानदार हैं और कुछ फेरी करने वाले। श्याम की राजधानी बैङ्कोक में २३ मई १९२० को आर्य समाज की स्थापना हुई। यहां आलीशान समाज मन्दिर है। यहां की आम जनता में आर्य समाज का काफी प्रभाव है।

मलेशिया--

मलाया देश की राजधानी कोलालम्पूर है। यहाँ आर्य-समाज मन्दिर है यद्यपि यह इस्लामी देश है।

सिंगापुर--

यह अब स्वतंत्र देश है। विश्व का एक बड़ा बन्दर-

गाह है । यहां आर्यसमाज का शानदार मन्दिर है । प्रचार भी होता रहता है ।

इंडोनेशिया–

यहां आर्य समाज का प्रचार शिथिल ही है ।

मेदन शहर में ही अधिकांश भारतीय बसते हैं, अतएव इस नगर में आर्य समाज भी स्थापित है । राय साहब हकीम भक्तराम जी के उद्योग से यहां प्रचार कार्य होता रहता है । भारत से अनेक उपदेशक प्रचार के लिए आते रहे हैं ।

ईराक–

यह एक स्वतंत्र मुसलिम राज्य है । इस प्रदेश में तीन मुख्य शहर हैं जिनके नाम हैं बगदाद, बसरा और मोसल । बगदाद और बसरा में आर्य समाजे हैं ।

ईराक में अनेक उपदेशक जा चुके हैं । उनके उपदेशों से समाज की शक्ति बढ़ी है । समाज के अधीन एक पुस्तकालय भी है, जिसमें वैदिक साहित्य का अच्छा संग्रह है ।

विदेशों में प्रचार की स्थिति–

आर्य समाज ने विदेशों में प्रवासी भाइयों के अन्दर धर्म प्रचार, समाज सुधार और शिक्षा विस्तार का जो आश्चर्यजनक कार्य किया है उसके सामने सभी का श्रद्धा से सिर झुक जाता है किन्तु यह ध्यान से ओझल नहीं करना

चाहिये कि आर्य समाज का कार्य प्रवासी भारतीयों तक ही सीमित रहा है–उससे आगे एक डग भी नहीं बढ़ सका है। विदेशों के मूल निवासियों में आर्य समाज का बिल्कुल प्रचार नहीं हो सका है। मोरिशस, फिजी, नेटाल, केनिया, टंगेनिका, यूगाण्डा, जंजिबार, ट्रिनीडाड, सुरीनाम, डमरेरा, मोजम्बिक आदि उपनिवेशों में सैकड़ों आर्य समाज कायम हो चुके हैं और दिन पर दिन उसका क्षेत्र और प्रभाव बढ़ता जाता है किन्तु इसमें एक भी ऐसा समाज नहीं है जिसका वहां के मूल निवासियों से सम्बन्ध हो।

(श्री स्वामी भवानी दयाल संन्यासी के एक लेख पर आधारित)

अपना देश :

पूर्वांचल में

हिमाचल प्रदेश की ओर

२

पूर्वांचल में

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, दिल्ली, की आज्ञानुसार मैं तीन मास के लिए आसाम का दौरा करने गया था। वर्तमान परिस्थितियों की जटिलता को देखते हुए मेरा मुख्य लक्ष्य वस्तुस्थिति को समझना तथा वैदिक धर्म का प्रचार करना था। दिल्ली से चल रास्ते में दो दिन इलाहाबाद चौक आर्य समाज में ठहर, मैं ६ मार्च १९६९ की सुबह गोहाटी स्टेशन पर पहुंचा। श्री शंकरसिंह विद्यालंकार मुझे स्टेशन पर लेने के लिए पधारे थे।

गोहाटी में प्रचार-

गोहाटी आसाम का प्रसिद्ध एवं तिजारती शहर है। ब्रह्मपुत्र नदी के किनारे बसा होने के कारण यह सुन्दर नगर है। हाल में ही यहां के आर्य समाज मन्दिर का आलीशान भवन बना है। इसके बनने से प्रवचन-उपदेश की व्यवस्था तो होगी ही, बच्चों में वैदिक संस्कार डालने, प्रचार के लिए केन्द्र बनाने जैसी कई गतिविधियों की सुविधा भी हो जाएगी। इसीलिए इसमें एक मौंटेसरी स्कूल भी खोला गया है। श्री रामप्रकाश आनन्द और श्री भगवत्-दयाल गुप्त शहर के नामी-ग्रामी महानुभाव हैं और सौभाग्य से आर्य समाज के अच्छे कार्यकर्त्ता हैं। इस शहर में मार-

वाड़ी, बिहारी और पंजाबी काफी संख्या में बसे हुए हैं। बहुत अरसा पहले सिख बढ़ई यहां आए थे, यह मेहनत और ईमानदारी का नतीजा है कि वे आज बड़े बड़े ठेकेदार हैं। फैंसी बाजार में अब एक गुरद्वारा है। साथ में कई दुकानें हैं। केन्द्रीय मन्त्री श्री फखरुद्दीन अली अहमद यहीं के रहने वाले हैं। फैंसी बाजार की बहुत सी दुकानों के वे मालिक हैं।

सामने ब्रह्मपुत्र नदो में बड़ी संख्या में अच्छे सुन्दर जहाज नजर आये। पता चला कि ये जहाज यहां से सवारी और सामान लेकर बंगला देश में से गुजरते हुए कलकत्ता जाया करते थे लेकिन अब पाकिस्तान को अड़चन नीति के कारण आने-जाने का प्रश्न ही नहीं रहा, इसलिए यहां बेकार खड़े हैं। अब, कुछ में परिवार रहते हैं, कुछ में सरकारी दफ्तर हैं और, कुछ में वच्चों के छोटे-मोटे स्कूल।

गोहाटी आर्य समाज–

यहां गोहाटी आर्य समाज मन्दिर तथा राम मन्दिर में मेरे दस दिन तक भाषण होते रहे। रविवार के सत्संग में मैंने अपने भाषण में इसाईयों की घातक गतिविधियों तथा १९७१ में होने वाली जनगणना में सावधान रहने के बारे चेतावनी दी। इस भाषण का अच्छा असर पड़ा। इसलिए आर्य समाज ने इस भाषण को हिन्दी, आसामी और अंग्रेजी में छपवाकर बांटने का निर्णय किया। इस समाज के प्रधान

श्री डा० नारायण दास का सप्रेम आतिथ्य मुझे प्राप्त होता रहा। आप स्वाध्यायशील, अनथक कार्यकर्त्ता और उत्साही यज्ञ प्रेमी हैं।

कामाक्षा देवी का मन्दिर—

गोहाटी के पास ही एक पहाड़ी पर लगभग एक हजार फुट की ऊंचाई पर कामाक्षा देवी का प्रसिद्ध मन्दिर है। यह मन्दिर बहुत अच्छा-खूबसूरत बना है। जगह जगह चित्रकला को देखकर मन प्रसन्न हो जाता है। पर इतने सुन्दर कोमल स्थान पर एक निर्मम काम होता है, वह है पशुबलि। यह इसका दुःखदायक पहलू है। सारा दिन पशुओं के खून से जमीन लथपथ रहती है। यहां कई पंडे-पुजारी हैं जिनका निर्वाह इस मन्दिर के चढ़ावे से होता है।

शिलांग का आलीशान आर्य समाज मंदिर—

गोहाटी में प्रचार करने के पश्चात् मैं आसाम की राजधानी शिलांग पहुंचा। यहां शिलांग की वही स्थिति है जैसे हमारे यहां शिमला की। जलवायु, मौसम आदि मिलता-जुलता है। ठण्डा और सुरम्य स्थान होने के कारण नेफा, त्रिपुरा, मणिपुर के सब बड़े बड़े दफ्तर यहीं हैं। अलग अलग राज्य बन जाने के कारण अब स्थिति बदल गई है। यहां का आर्य समाज मन्दिर शहर के आलीशान बाजार जी० एस० रोड पर स्थित है। लोअर बाजार

शिमला के समाज मन्दिर की तरह नीचे किराये पर चढ़ी दुकानें भी हैं। बीच में सत्संग के लिए विशाल हाल है। ऊपर तीसरी मंजिल पर मेहमानों और मुसाफिरों के लिए रिहायशी कमरे हैं। इस समाज के अधीन दो स्कूल चल रहे हैं। इस समाज के प्रसिद्ध कार्यकर्त्ता श्री तीर्थराम, रिटायर्ड एस० डी० ओ०, श्री सी० एल० शर्मा, श्री सत्यानन्द आर्य स्टोर वाले हैं। ये लोग स्थायी तौर पर यहां रहते हैं। इन्हीं के परिश्रम से इतना विशाल सुन्दर आर्य समाज मंदिर बन सका।

इसाईयों का फैला जाल

१६ मार्च १९६९ से मेरे भाषण आर्य समाज मंदिर में होने लगे। हाजरी अच्छी होती थीं। यहां काम करने की बहुत गुंजाइश है क्यों कि यह शहर इसाईयों का बहुत बड़ा केन्द्र है। स्कूल, कॉलेज (लड़कियों के भी), पुस्तकालय, गिरजा घर, हस्पताल इत्यादि का ऐसा जाल बिछा हुआ है जैसे आर्य समाजी संस्थाओं का लाहौर में था। यहां सात बड़े गिरजाघर हैं और बड़ी संख्या में पादरी नगर में छाए हुए हैं। मैंने अपने भाषणों में जनता को इस समस्या के बारे में सावधान किया और जागरुक रहने का आग्रह किया। इसका जनता पर असर पड़ा। मेरा प्रोग्राम यहां २३ मार्च तक का था।

उसी जाल में चेरापुंजी

शिलांग के बाद मेरा प्रोग्राम चेरापुंजी का था। चेरापुंजी में मैंने महसूस किया कि शिलांग की तरह यह नगर भी मिशनरियों का गढ़ है। जिधर देखो उधर चर्च ही चर्च दिखाई देते हैं। यहां भी स्कूल-हस्पताल-लायब्रेरियों-गिरजाघरों नरसरी स्कूलों इत्यादि का जाल सा बिछा हुआ है। इस इलाके में देहात, छोटे-मोटे कस्बों में भी गिरजाघर हैं। हर गिरजा घर में एक पादरी सपरिवार रहता और धर्म प्रचार करता है। पता चला कि यहां पर इसाई प्रचार के लिए ३० लाख रुपये प्रति वर्ष खर्च किया जाता है। इसका पक्का सबूत है यहां की बढ़ती हुई इसाई जनसंख्या। सात साल पहले यहां की चार हज़ार की आबादी में तीन हज़ार ख़ासी आदिवासी और एक हज़ार इसाई थे। इस समय २॥ हजार इसाई और १॥ हजार ख़ासी हैं। असल में इस इलाके में इसाईयों का प्रचार बहुत फैला हुआ है और जोर से चल रहा है। इस चिन्ताजनक स्थिति के बारे में मैं यहां की विधान सभा के कई सदस्यों से मिला, मंत्रियों से भी बात-चीत की परंतु किसी से संतोषजनक समाधान नहीं मिला। ऐसा लगता कि जनता और सरकार ग़फलत में पड़े हुए हैं और इस स्थिति का लाभ उठा रहे हैं इसाई पादरी!

आशा की किरण : रामाकृष्ण मिशन

पादरियों की गतिविधियों को सुन मेरा मन बहुत अशांत एवं अस्थिर रहता था, ऐसे में आशा की किरण दिखाई दी रामाकृष्णमिशन के आश्रम में। उनको देख संतोष हुआ और लंका में विभीषण के मकान की याद आई जिस पर राम नाम लिखा हुआ था।

इस आश्रम का सम्बन्ध कलकत्ता के प्रसिद्ध विलूरमठ से है। यह संस्था पिछले ४५ वर्षों से खासी लोगों में सुधार एवं उद्धार का कार्य कर रही हैं। इस मिशन का सूत्रपात रात्रि पाठशाला से हुआ। अपने परिश्रम सद्-भावना एवं साधना के फलस्वरूप आज इनका एक विशाल भवन और कई संस्थायें हैं। चेरापुंजी में ही एक हाई स्कूल, दो मिडिल और २८ प्राइमरी स्कूल, एक बोर्डिंग हाउस, एक औद्योगिक स्कूल, एक बुनाई स्कूल, एक कढ़ाई, टाइप, दर्जीगीरी, मधुमक्खियों से शहद निकालने आदि के प्रशिक्षण स्कूल हैं, एक गौशाला भी है। इनका अपना एक हाल है जिसमें अक्सर नाटक खेले जाते हैं और कभी सिनेमा फिल्में भी दिखाई जाती हैं। इस हाल में ५०० सीटें हैं। इन संस्थाओं में २४५ अध्यापक और एक हजार लड़के शिक्षा पा रहे हैं। ऐसे महान् सेवा कार्य के लिए केन्द्रीय सरकार ५० हजार रुपये और आसाम सरकार भी ग्रांट देती है। आश्रम की अपनी दो बसें भी हैं। एक में सौ तथा दूसरी में ५०

विद्यार्थी बैठ सकते हैं। दो जीपें आश्रम के कार्य-कर्ताओं और अध्यापकों की सुविधा के लिए हैं। १४ मील की दूरी तक के इलाकों से छात्रों को इन बसों द्वारा यहां लाया-ले जाया जाता है। और, यह सब कुछ मुफ्त होता है। यहां तक कि स्कूलों में कोई फीस नहीं ली जाती। छात्रावास में ८० विद्यार्थी हैं जो नागा, मीज़ू, गारू, नेफा, मणिपुर, ख़ासी, मकर जातियो में से हैं। सब तरह के बच्चे हैं, पहाड़ी-इसाई-हिन्दी इत्यादि। छात्रावास के लड़कों को दूध-भोजन के लिए केवल ३७ रु० प्रति मास देना पड़ता है। यह रकम इस इलाके और इस जमाने के लिहाज़ से बहुत कम है।

मेरा ऐसी संस्था की गतिविधियों में रुचि लेना स्वाभाविक था। मैंने इन बच्चों से बातचीत की। उनसे सब तरह की चर्चायें हुईं—धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक। इन सब के रीति रिवाज और संस्कार अलग-अलग हैं परन्तु इस संस्था में आकर इनकी आदतों और विचारों में सुधार होता है। कुछ विद्यार्थी आराम से हिन्दी बोल लेते हैं, कुछ केवल समझ सकते हैं, शेष अपनी-अपनी भाषा का सहारा लेते हैं। एक उल्लेखनीय अनुभव यह हुआ कि ये बच्चे चाहे हिन्दी न बोलें, न समझें परन्तु हिन्दी फिल्मों के गाने खूब पसंद करते हैं और मस्ती से गाते हैं। मैंने जब आजकल की नई तर्ज़ों के गाने सुनाए तो ये बहुत खुश हुए।

उदार जीवन दृष्टि

इस आश्रम के मुख्य अधिकारी स्वामी प्रमथानन्द जी महाराज हैं। जन्म से बंगाली हैं परन्तु मेरे साथ बहुत देर तक हिन्दी में विचार-विमर्श करते रहे। सचमुच बहुत विद्वान्, धर्मात्मा एवं तपस्वी सज्जन हैं। उन्होंने मेरा आदर एवं स्वागत किया। उन्होंने अन्य सहयोगियों से मेरा परिचय भी करवाया। उनसे मिलकर मैंने महसूस किया कि रामाकृष्ण आश्रम का लक्ष्य शुद्धि नहीं है। किसी इसाई को हिन्दू बनाना इनका काम नहीं परन्तु ये लोगों में निश्चय ही हिन्दू धर्म की संस्कृति, दर्शन एवं विचारधारा का प्रचार करते हैं। इनके प्रचार का ढंग आधुनिक, वैज्ञानिक तथा प्रभावशाली है। कठिन से कठिन तत्त्व एवं ज्ञान की बात को सरल एवं ग्राह्य बनाकर जनता के सामने रखते हैं। दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता है इनकी उदारता। इनमें सहनशीलता है, संकीर्णता नहीं। इसलिए ये लोग जहां गये हैं इनका कोई विरोध नही करता बल्कि लोग अपने आप इनके भक्त एवं श्रद्धालु बनते जाते हैं।

साहसी युवक का आदर्श जीवन

आश्रम में कुछ अध्यापक वैतनिक है, कुछ संन्यासी ऐसे हैं जिन्होंने अपनी जीवन-सेवाएं अवैतनिक तौर पर दे रखी हैं। ये सभी लोग विचारों से स्पष्ट, प्रबुद्ध तथा दृढ़

हैं। अचानक एक २२ वर्षीय युवक मेरे पास आया और नमस्ते करके आदर से पूछने लगा —पं० जी आप मुझे पहचानते हैं ? मैं आप के पास वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर की लायब्रेरी में अखबार पढ़ने आया करता था। उन दिनों मैं आयुर्वैदिक कॉलेज में पढ़ता था। अब मैंने इस आश्रम को अपना जीवन सौंप दिया है। मैंने खासी लोगों की भाषा भी सीख ली है। उनके गांवों में आता जाता हूं। इन पिछड़ी जातियों के लोगों को उनकी भाषा में, हिन्दू संस्कृति के गौरव एवं महत्ता का परिचय करवाता हूँ। अब मेरा जीवन इन्हीं लोगों में है और इन्हीं लोगों के लिए है। उस युवक ने मुझे विश्वास दिलाया कि जब मैं दोबारा इस इलाके में प्रचार के लिए आऊं तो वह मेरे साथ गांवों में जाकर मेरे भाषणों का अनुवाद करता और समझाता जाएगा। इस युवक का नाम है ब्रह्मचारी दर्शन महाराज। इस आश्रम के नियमानुसार जीवन दान देने वाले ब्रह्मचारियों को महाराज कह कर पुकारा जाता है। फिर ४ साल के बाद इनको संन्यासी बनाया जाता है। इन लोगों के स्नेहपूर्ण आग्रह से मैं कुछ दिन और यहां रुका रहा।

हरिनगर में इसाई-धर्मांधता

मैं जिला वर्ग के हरिनगर में गया। वहां एक इसाई हाई स्कूल है जिसे आसाम सरकार की तरफ से ग्रांट मिलती है। इस स्कूल में (शायद दूसरी जगह भी ऐसे ही होता

होगा) पहली घंटी में अनिवार्य रूप से क्लास को बाइबिल पढ़ाई जाती है। वार्षिक परीक्षा में बाइबिल का पर्चा अनिवार्य होता है और बाकायदा उसके नम्बर जुड़ते हैं। छात्रावास में ८० विद्यार्थी हैं जिनमें केवल ५ या ७ इसाई हैं। फिर भी होस्टल के विद्यार्थियों को दोनों समय गिरजा घर में प्रार्थना के लिए जाना जरूरी है।

मिशन की उदारता

अब दूसरा पहलू देखिये। चेरापुंजी के रामाकृष्ण मिशन आश्रम के हाई स्कूल में पहले घंटे में कोई अनिवार्य धार्मिक प्रार्थना नहीं होती। बच्चे चुपचाप शांत रहकर अपने अपने विश्वास के अनुसार प्रार्थना कर सकते हैं। यही नहीं, उनके पूजा-मंदिर में स्वामी रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानन्द, महात्मा बुद्ध के साथ हज़रत ईसा की भी तस्वीर है। गीता का पाठ होता है, वह भी अनिवार्य नहीं। दूसरे शब्दों में, यहां अधिकारियों का मुख्य उद्देश्य बच्चे के धार्मिक संस्कारों को विकसित करना है न कि उसके अन्दर धर्मांधता की ज़हर भरना। इस पर भी इसाई पादरी आंदोलन करते हैं कि धर्म निरपेक्ष राज्य से ग्रांट लेने वाले स्कूलों में गीता क्यों पढ़ाई जाती है ? इन संकीर्ण विचार और अनुचित लाभ उठाने वाले पादरियों को अपनी आदत दिखाई नहीं देती। इस तरह पक्षपात पूर्ण आन्दोलन करके वे अपने प्रचार कार्य के लिए निर्विघ्न मार्ग चाहते हैं।

मैं जब शिलांग से चला था तो मैंने एक बंगाली महाशय श्री हेमदत्त, रिटायर्ड हैड मास्टर को साथ ले लिया था। वे अंग्रेजी, हिन्दी, नेपाली, बंगाली, आसामी भाषायें जानते थे और इससे मुझे बहुत आराम हो गया। मैं यहां की कोई भी भाषा नहीं समझता था। उनकी खासी, जयन्तिया, गारू जाति के लोगों से काफी जान पहचान भी थी। ये इलाके बंगला देश की सीमा को छूते हैं। इस सीमावर्ती इलाके के लिए शिलांग से छोटी बसें चलती हैं। ट्रैफिक एक तरफा है। सड़क भी अच्छी नहीं बनी। पहाड़ी इलाका होने के कारण चढ़ाई उतराई है। ऊंचे-ऊंचे पहाड़ हैं। नदी के एक तरफ खासी, जयन्तिया के लोग रहते हैं और दूसरी तरफ गारू के। यह ३२ मील का सफर ३॥ घंटे में खतम हुआ।

शेमला में—

चेरापुंजी से एक प्राइवेट गाड़ी सीमावर्ती नगर शेमला को जाती है। यह छोटा सा नगर सीमा की छोटी सी पहाड़ी पर स्थित है। साथ में नदी बहती है, उसका नाम भी शेमला है। इस नदी के किनारे खड़े हो जायें तो सामने बंगला देश के जिला सिलहट के गांव, पशु, खेत सब साफ दिखाई देते हैं। यहां केले और नारंगियों के बड़े बड़े बाग हैं। यहां की नारंगियां दूसरे प्रांतों में भेजी जाती हैं। पास हवाई अड्डा भी है।

इस इलाके में पुरानी परम्पराओं का पालन चल रहा है। राजाओं के दरबार लगते हैं।

शिलांग-गोहाटी रोड पर एक छोटी सी पहाड़ी है जिसे 'शिलांग पीक' कहते हैं। आज से ३५ साल पहले यहां एक मेले में मनुष्य की बलि दी गई थी। इस स्थान का नाम ही नरबलि स्थान पड़ गया है। अंग्रेजों ने कानूनी तौर पर इस रस्म को बन्द कर दिया था।

डिगारू की ओर-

गोहाटी के २२ मील के फासले पर एक गांव है डिगारू। यहां सब लोग इसाई बन चुके हैं। कुछ अरसा पहले कलकत्ता के आर्य नेता श्री मेहरचन्द धीमान ने इस इलाके में ठेके लिए। इसलिए वे कुछ दिन यहां रहे। यहां के लोगों के रीति-रिवाज और इसाई प्रचार को देखा समझा। गोहाटी आर्य समाज के प्रधान मलिक साहब को साथ ले कर उन्होंने इस गांव में प्रचार किया।

डिफू में दयानंद सेवा आश्रम

डिफू गोहटी से लगभग २० मील की दूरी पर स्थित रेलवे स्टेशन है। यह कछार हिल्ज़ का सदर मुकाम है। इस इलाके की आबादी ३ लाख से ज्यादा है। इस क्षेत्र में चक्कर नाम की आदि जाति बसी है जो धर्म संस्कृति, आचार-व्यवहार की दृष्टि से हिन्दू है। यहां की ज़िला

परिषद् के मुख्य नेता श्री धनी राम एम० एल० ए, श्री जयचन्द वर्मानी, शिक्षा मंत्री, श्री सारवाङ्ग पई, वैदिक धर्मी विचारों के हैं। यह पहाड़ी क्षेत्र अभी तक इसाई प्रचार से बचा हुआ है।

आस-पास के गारू और खासी पहाड़ी क्षेत्रों में इसाई पादरियों का प्रभाव बढ़ रहा है। यह चिन्ता की बात है। इन तीनों प्रदेशों में इसाइयों की कुल जनसंख्या ६ लाख के करीब है।

डिफू में, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनीधि सभा, दिल्ली, की तरफ से दयानंद सेवा आश्रम के नाम से एक केन्द्र खोला गया है। इसके साथ डी० ए० वी० स्कूल की स्थापना कर दी गई है। इसमें अभी ३० बच्चे हैं। इसमें मिल्ट्री-सिविल अधिकारियों के बच्चे भी शामिल हैं। ज्यादा संख्या अन्य जाति के बच्चों की है। यह स्कूल अभी एक सरकारी इमारत में चलाया जा रहा है। मीज़ो हिल्ज़ की जिला परिषद् ने दयानन्द सेवा आश्रम को १५० बीघा ज़मीन दी है। इस ज़मीन पर सुन्दर भवन बनाने की योजना है जिसमें एक गौशाला, एक दवाखाना खोलने का विचार है। बम्बई के कुछ धनीमानी सज्जनों ने इस आश्रम के लिए सभा को काफी धन दिया है। यह आंश्रम आसाम भर में आर्य सामाज के प्रचार तथा अन्य गतिविधियों का विशाल केन्द्र बनेगा। स्थानीय लोग भी इस महत्त्वपूर्ण योजना में

रुचि ले रहे हैं और सहयोग दे रहे हैं। श्री भूरे लाल शर्मा बहुत दिलचस्पी ले रहे हैं। श्री दिलीप शर्मा अध्यापक हैं और रामकुमार एम० ए, आश्रम के संचालक है। लाला रामगोपाल शालवाले ने सार्वदेशिक सभा की ओर से ५० हजार रु० दिए हैं, शेष राशि बाद में क्रमशः भेजते रहेंगे।

भेद नीति के बुरे नतीजे

इस इलाके में पाकिस्तानी और चीनी एजेंटों एवं जासूसों का जाल सा बिछा है। वे यहां आसामी-गैर-आसामी का सवाल खड़ा करना चाहते हैं। इस द्वेष की आग का यह नतीजा निकला कि २६ जनवरी १९६८ को मारवाड़ियों और बिहारियों के मकानों को आग लगाई गई और लूटा गया। पंजाबियों पर भी हमला होने लगा था परन्तु पंजाबी बहादुरी से मुकाबिला करने के लिये लाठियां लेकर सामने आ गए थे, इस लिए बच गये। ये एजेंट तथा जासूस यहां के मुसलमानों को बहकाते हैं। उनकी यह गहरी चाल है कि आसाम में से पंजाबी-मारवाड़ी-बिहारी-नेपाली इसाई लोगों को निकाल दिया जाए तो इस प्रांत में मुसलमानों की संख्या बढ़ जाएगी, फिर जैसे इसाइयों ने नागालैन्ड बनवा लिया ये भी अलग एवं स्वतंत्र हो जाएंगे।

यहां से गोहाटी होता हुआ मैं कार्य-क्रम के अनुसार, उदालगड़ी स्टेशन पर पहुंचा। यह नगर भूटान की सीमा पर स्थित है। यहां पर हर बुधवार को बड़ा बाजार लगता

है जहाँ हजारों भूटानी स्त्री-पुरुष-बच्चे कुछ सामान बेचने और घरेलू सामान खरीदने आते हैं। यहां चाय के बड़े-बड़े बाग हैं जहां नेपाली, बंगाली, उड़िया और मध्य प्रदेश के मजदूर काम करते हैं। मध्य प्रदेश के मुड्डा जाति के सब लोग इसाई बन चुके हैं। नेपाली और उड़िया भी इसाई बन रहे हैं लेकिन बंगाली मजदूरों में से एक भी इसाई नहीं बना। ऐसा लगता है कि सारा इलाका इसाई प्रचारकों के जाल में फंस रहा है। इस पहाड़ी इलाके को नागालैंड की तरह अलग करने की मांग जोर पकड़ रही है और इस इलाके के साम्यवादी और मुसलमान इन मांग करने वाले इसाई नेताओं का समर्थन कर रहे हैं।

नामरूप में आर्य समाज



आसाम के प्रसिद्ध नगर नामरूप आर्य समाज मन्दिर में श्री नन्द लाल वानप्रस्थी जी। उनके दाएं तथा बाएं समाज के प्रधान श्री कृष्ण लाल जी और उनकी धर्मपत्नी खड़े हैं।

आर्य समाज, नामरूप, जिला लखीमपुर नागालैंड की सीमा स्थित एक नगर है। इसके दूसरी तरफ नेफा के पहाड़ शुरू हो जाते हैं। इस समाज का अभी वार्षिक उत्सव हुआ है। यहां मेरे कई भाषण हुए। यह समाज मंदिर खाद फैक्ट्री एरिया में है। यहां के चीफ अकांउन्ट्स ऑफिसर श्री कृष्ण लालजी पक्के ग्रार्य समाजी हैं। मैं इन्हीं की कोठी में ठहरा था। इनमें बहुत उत्साह एवं निष्ठा है। ये मेरे कार्यक्रम में बहुत रुचि लेते रहे। प्रभुकृपा से इनको जीवन साथी भी अच्छा मिला है। इनकी धर्म पत्नी आर्य समाज की सक्रिय कार्यकर्त्री हैं। इसलिए आर्य समाज के काम-काज में पति का पूरा-पूरा सहयोग देती हैं। दोनों के अन्दर स्नेह, सद्भावना तथा सेवा भाव कूट-कूट कर भरा है।

चाय ग्रौर तेल के उद्योग

मैं नामरूप में प्रचार कार्य करने के बाद मोटर से डिबरूगढ़ ग्राया था। पाँच घण्टे का रास्ता है। रास्ते में मीलों तक चाय के बड़े बड़े बाग—सड़क के दोनों ग्रोर दिखाई दिए। नाहर कटी के पास मिट्टी के तेल के कूएं ही कूएं मिले। तेल के विकास के लिए सारे इलाके में लोहे के पाइपों का जाल बिछा हुआ है। पाइप द्वारा तेल गोहाटी ले जाया जाता है, वहां से ७५० मील दूर बरूनी तेल साफ करने के कारखाने में पहुंचाया जाता है। यह तेल साफ करने का बहुत बड़ा कारखाना है जहां ग्रीस, मोबिल आयल,

पैट्रोल तैयार किया जाता है और तेल साफ किया जाता है। डबकोई, नूनमाटी और बरूनी तेल साफ करने के तीन बड़े स्थान हैं। तेल का उद्योग सरकार के हाथ में है। इस में ५१ प्रतिशत भारत सरकार और ४९ प्रतिशत ब्रिटिश सरकार के हिस्से हैं। चाय का कारोबार प्राइवेट कंपनियों के हाथ में है। इनमें अधिकांश बागों के मालिक अंग्रेज हैं। कुछ अंग्रेज तो अपने बाग बेच कर इंग्लैण्ड जा रहे हैं।

कछार जाति के लोगों में—

चेरापुंजी से आगे मैं सरहदी इलाकों का दौरा करने गया जहां कछार जाति के लोग बसे हुए हैं। यह एक ऐसा पहाड़ी इलाका है जहां के लोगों को नागालैण्ड की तरह अलग करने की घोषणा १३ जनवरी १९६८ को की गई थी। यह कार्य गृहमन्त्री ने किया था। इसका परिणाम यह निकला कि २४ जनवरी १९६८ को सारे आसाम में विरोध दिवस मनाया गया। गाड़ियां रोकी गई, क्रोध तथा आवेश में जनता ने देवी इन्दिरा का बुत जलाया। यह हंगामा कुछ दिन दबा रहा पर अन्दर ही अन्दर आग सुलगती रही।

यह इलाका बहुत सम्पन्न है। मीलों तक चाय के बाग हैं, कोयले की खानें हैं। यहां के जंगलों में कीमती लकड़ी पाई जाती है। बांस, मोम, रबड़, लाख की यहां बहुतायत

है। उसके घने जंगलों में हाथी, शेर, हिरण, बारहसिंघे भी काफी हैं।

इस जिले के नामरूप स्थान पर सरकार का खाद कारखाना तथा बिजली पैदा करने वाला पावर हाउस है। सारे आसाम में ८० प्रतिशत मकान बांस के मिलेंगे। दीवारें, खिड़कियां, रोशनदान सभी बांस के बने होते हैं।

यहां की खाद फैक्ट्री एरिया में जो आर्य ससाज का भवन बना है वह भी बांस का है। इस समाज में मैं एक सप्ताह भाषण देता रहा हूँ। इसके साथ दूसरे नगरों का प्रोगाम बन चुका था।

शिवसागर के नए अनुभव

शिव सागर में मुझे नए अनुभव हुए। यह एक रियासती इलाका है जहां अभी तक राजाओं के महल मौजूद हैं। यहां एक सरोवर और तीन बड़े-बड़े मंदिर हैं -शिव, विष्णु एवं दुर्गा के। शिव मंदिर सागर के कारण इस नगर का नाम शिवसागर है। यह मन्दिर एवं सागर महारानी आसाविका का है। महारानी ने इन्हें १७३४ ई० में वनवाया था। यहां मारवाड़ी बहुत संख्या में रहते है। यह व्यापार का भी केन्द्र हैं। मेरे ठहरने एवं प्रचार का प्रबन्ध मारवाड़ी समाज ने किया।

वैष्णव भावना

कहां आसाम के आदिवासियों के विचित्र विश्वास, धार्मिक संस्कार और कहां उन लोगों में विष्णु मंदिर! प्रायः ऐसे स्थानों में शिव या दुर्गा या उसके किसी रूप को ही पूजा का आधार बनाया जाता है। यह प्रवृत्ति सम्भवतः सारे भारत में मिलती है। विष्णु के पूजा स्थान कम हैं परन्तु हैं महत्त्वपूर्ण !

मणिपुरः कला और संस्कृति का केन्द्र

मणिपुर राज्य के एक ओर नागालैंड तथा दूसरी ओर बरमा की सीमा हैं। इसका क्षेत्रफल २२२७४ वर्ग किलोमीटर तथा आबादी ७८०००,३७ है। वैसे तो यहां के सभी लोग मणिपुरी कहलाते हैं परन्तु यहां भी कई जातियां बसती हैं–मोथी, तांखूल; कबुइ, कुकी, माउ, गांगटी आदि। सबकी अपनी अपनी भाषा है, रीति रिवाज भी एक जैसे नहीं परन्तु सामूहिक रूप से मणिपुर के लोग काफी सभ्य एवं शिष्ट है। अन्य पहाड़ी इलाकों के मुकाबिले इनकी सभ्यता प्राचीन है और समृद्ध भी है। यह लोग वैष्णव धर्म को मानने के कारण अपने आपको विशिष्ट समझते हैं। राजधानी इम्फाल नगर, जो इम्फाल नदी के किनारे बसा होने के कारण इसी नाम से प्रसिद्ध है, में दो मंदिर मशहूर हैं– एक गोविंद जी का दूसरा हनुमान जी का। यहां हर

वर्ष मेला लगता है। वैसे, हर मुहल्ले में कृष्णजी के मंदिर मिल जाएंगे। स्त्री-पुरुषों के माथे पर चन्दन का तिलक लगा हुआ मिलेगा। वैष्णव होने के कारण यहां के लोग स्वच्छ रहते हैं। इनका मणिपुरी नृत्य तो भारत की साँस्कृतिक परम्परा का गौरव-चिन्ह है। इन लोगों की नृत्य और संगीत में शुरु से ही बहुत रुचि रही है। इसीलिए अपने को सामवेदी कहते हैं। इसके अतिरिक्त हस्त-शिल्प कला, चादर, शाल, हाथी के दांत की वस्तुएं आदि के निर्माण में भी ये लोग आगे है। इनके यहां एक विचित्र रिवाज है। लड़का विवाह से पहले लगातार तीन वर्ष भावी ससुराल में रहता है ताकि यह प्रामाणित कर सके कि वह परिश्रमी और सुयोग्य है।

मणिपुर एक हिन्दू राज्य था जिसके महाराजा का नाम बुद्धचन्द था। इनकी कुछ काल पहले मृत्यु हो गई। उनका एक लड़का ओकिंदर अभी १६ साल का है और कालेज में शिक्षा पा रहा है।

औरतों के हाथ में कारोबार

इस इलाके के पुराने बाजारों का सारा व्यापार औरतों के हाथ में है। मनियारी बाजार, किरयाने का बाजार, सब्जी-फल का लेन-देन सभी औरतें करती हैं। आपको शायद ही कोई दुकान ऐसी मिलेगी जहां मर्द बैठता हो। यहां तक कि बाजार में घूम फिर कर बेचने वाले, पान

सिगरेट वाले भी औरतें हैं। एक बार नेहरु जी ने यहां के पुरुषों को बहुत फटकारा था क्योंकि वे औरतों की कमाई खाते हैं। अब कुछ कुछ फर्क पड़ रहा है।

बढ़ता हुआ पंजाबी-मारवाड़ी प्रभाव

नए बाजारों में मारवाड़ी और पंजाबी बड़ी बड़ी दुकानें बनाकर व्यापार अपने हाथ में ले रहे हैं। इन बाजारों में घूमते हुए कभी कभी ऐसा लगता है जैसे जालंधर-लुधियाना के बाजारों में घूम रहे हों। हर दो दुकानों के बाद सिख भाई की दुकान मिलेगी। यहां पर करीब ३ हजार पंजाबी आबाद हैं जिनमें थोड़े से परिवार ही हिन्दुओं के हैं, शेष सभी सिख हैं। इसलिए बाजारों का वातावरण पंजाबी हो गया है। यहां मारवाड़ी भी कम नहीं, लगभग ३ हजार हैं। इनमें से दो हजार जैनी हैं। ये सब राजस्थान के रहने वाले हैं। शुरू शुरू में मुझे बहुत आश्चर्य हुआ कि अपने इलाकों से इतनी दूर ये लोग इतनी संख्या में यहां कैसे आ कर बस गए ? पूछने पर पता चला कि दूसरे महायुद्ध में बरमा से काफी पंजाबी-मारवाड़ी निकाले गए थे। मणिपुर के महाराजा ने शरणार्थी होने के कारण इन्हें आश्रय दिया। अब इन सब की आर्थिक दशा बहुत अच्छी है।

सिखों का गुरुद्वारा

सिख तो यहां ऐसे रह रहे है जैसे यहीं के रहने वाले

हों। उन्होंने एक आलीशान गुरुद्वारा बनाया है। इसके साथ कई दुकानें हैं। हजारों रु० मासिक किराया आता है। इस गुरुद्वारे का हाल इतना बड़ा है कि जहां तक मुझे याद पड़ता है, पंजाब के किसी गुरुद्वारे का हाल उतना बड़ा नहीं है। सुबह रोज़ कीर्तन होता है, यहां की सिख औरतें सत्संग में आती हैं। इनकी अलग अपनी पंजाबी दुनियां है।

नेताजी की ऐतिहासिक विजय

मणिपुर को एक और गौरव प्राप्त है । १९४२ में नेताजी सुभाषचन्द्र बोस ने इस मार्ग से भारत में प्रवेश कर सबसे पहले यही तिरंगा झण्डा फहराया था। उनकी सैनिक कार्यवाही से इम्फाल शहर खाली हो गया था । उनके ओजस्वी भाषणों की गूंज और चर्चा आज भी इम्फाल और कोहिमा में सुनाई देती है। अब तो यह ऐतिहासिक सत्य सिद्ध हो चुका है कि इस कार्यवाही से सारे देश में क्रांति की लहर दौड़ उठी।

इसाई-प्रचारकों की असफलता

यह सच है कि पहाड़ी इलाकों में मणिपुर सांस्कृतिक दृष्टि से बहुत आगे है। शायद वैष्णव धर्म के प्रति निष्ठा होने के कारण ही इनका हिन्दू धर्म में अटल विश्वास एवं श्रद्धा है। मणिपुर के आस-पास के आदिवासी इसाई हो रहे हैं। नागालैंड इसका प्रमाण है परन्तु यहां कोई इसाई

नहीं बना, बल्कि मणिपुर में रहने वाले नागा भी इसाई नहीं बने। यहां हिन्दी का खूब प्रचार हो रहा है। विभिन्न कक्षाओं में हिन्दी अध्यापन की व्यवस्था की गई है। बच्चे शौक से हिन्दी पढ़ रहे हैं। परिणामस्वरूप आने वाली पीढ़ी को हिन्दी बोलना या समझाना कठिन न होगा। मुझे यहां प्रचार करना बहुत अच्छा लगा। मेरे भाषणों में मारवाड़ी और पंजाबी तो आते थे, वहां मणिपुरी मंडली का कीर्तन खूब जमता था।

मणिपुर भारत का दूसरा सीमांत प्रदेश है जहां रेलों, बसों का सफर सैनिक पहरे के अधीन होता है। पर स्थिति धीरे-धीरे सुधर रही है।

खाने के अजीब शौक

मणिपुर में एक ऐसा बाजार जहां पर हर किस्म का गोश्त, अंडे, और मरे जीव जन्तुओं का अचार मिलता है। सूखे मांस का बहुत व्यापार है। यहां के लोग वैष्णव मतावलम्बी हैं परन्तु मछली खाते हैं। वे इसे मांस नहीं सब्जी समझते हैं और इसलिए जलतोरी कहते हैं। नागा लोग ज्यादा परहेज़ नहीं करते। कुछ इलाकों में चिड़िया, चूहा, मेढ़क, सांप, कछुए, कीड़े, तो क्या मनुष्य का मांस खाया जाता है।

यहां मेरी यह जानने की इच्छा हुई कि ये लोग किस जानवर का मांस पका कर ज्यादा बेचते हैं। अचानक लोहे

के बहुत बड़े बर्तन पर मेरी नजर पड़ी जहां पानी में तीन तीन चार चार फुट लंबे सांप पड़े हुए थे। मैं सकते में ग्रा गया ग्रौर टिकटिकी लगा कर देखने लगा। मेरी बुद्धि काम नहीं कर रही थी। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि ये जीवित होते हुए भी इन्हें काटते क्यों नहीं ? क्या इनका जहर निकल चुका है ? मुझसे रहा न गया। मैंने उस दुकानदार ग्रौरत से इशारे से पूछा क्योंकि न वह मेरी भाषा समझती थी ग्रौर न मैं उसकी। उसने एक सांप उठाया और मुंह की तरह इशारा करते हुए बताया कि इसे खाया जाता है। मुझे विश्वास नहीं हुआ। मैं फौरन रिक्शा लेकर धर्मशाला आया ग्रौर ग्रपने मिलने वाले से सारी बात पूछी। वह खुद हैरान हुग्रा और तत्काल रिक्शा पर बैठ बाजार ग्राया, देखा। उनकी भाषा में पूछा, पता चला कि ये सांप नही केंचुए हैं जो तीन तीन चार चार फुट लम्बे सांप की तरह होते हैं। बरमा, मणि-पुर में शौक से खाए जाते हैं। यही नहीं, केकड़े भी खूब खाए जाते हैं। यह सब देखकर मैं बहुत उत्तेजित हुआ। इन लोगों का खान-पीन कितना भिन्न है ? और, जिसे हम घृणा करते हैं उसे ये पसंद करते हैं। मुझे एक कविता याद ग्राई जिसका भावार्थ इस प्रकार है—मांस खाने वाले के हाथ से ग्राकाश में उड़ने वाली चीजों में से केवल पतंग बची है क्योंकि कागज़ और बांस को हज़म करना कठिन

है, पानी में रहने वालों में केवल किश्ती बची है, चौपाओं में से केवल चारपाई। ये बातें इन लोगों पर कितनी सच उतरती हैं !

इधर, कुछ इलाकों में सूअर को मार कर उसके पेट की गंदगी आदि को निकाल दिया जाता है। उसमें चावल भर आंतों की सिलाई कर देते हैं। लकड़ियों के ढेर पर इस सूअर को खूब भूना जाता है। पक कर ठंडा होने पर सारा परिवार चारों तरफ बैठकर खूब मजे से खाता है।

कुछ इलाकों में सांप भी मार कर खाया जाता है। सांप को मारकर लोहे की कढ़ाई में चूल्हे के ऊपर रख देते हैं। कढ़ाई में पानी भर देते हैं और इस तरीके से सांप को डालते हैं कि उसका मुंह कुंडे से बाहर रहे। इसी तरह उसकी पूंछ भी पानी से बाहर रहे। बीच का हिस्सा गरम पानी में खूब उबलता रहता है और बहुत नरम हो जाता है। उबलने के दौरान सांप के मुंह से हरे रंग का पानी और पूंछ से कुछ नीले रंग का पानी निकलता है। इस तरह सांप का विष निकल जाता है। सिर और पूंछ को काट दिया जाता है और शेष हिस्से को नमक-मिर्च लगा कर ककड़ी-खीरे की तरह मजे से खाया जाता है।

विचित्र रीति-रिवाज

मणिपुर में मेरे भाषणों में एक बुजुर्ग रिटायर्ड स्कूल मास्टर पं० शर्मा आया करते थे। वे बहुत अर्सा से वहां

रह रहे हैं। यहां के खानपान के बारे में ऐसी बातें बताईं जिनपर मेरा विश्वास करना कठिन था। जब कुछ और लोगों ने पुष्टि की तब मुझे ये बातें सच लगीं। कोहिमा ४०-४४ मील ऊपर ओखा सब-डिविजन के घने पहाड़ों में एक ऐसा इलाका है जहां डर से कोई आदमी नहीं जाता। अगर भूला भटका कोई परदेशी वहां पहुँच जाये तो उसे पकड़ कर ले जाते हैं और किसी पेड़ के साथ पैरों पर रस्सी बांध उल्टा लटका देते हैं। वह मर जाता है और उसका खून बाजुओं तथा चेहरे पर इकट्ठा हो जाता है। उसके हाथ या बाजुओं में एक सुराख करके अपने मुंह से खून चूसते हैं। उसके बाद उसे न जलाते हैं न दफनाते है, बल्कि टुकड़े टुकड़े करके सारी बस्ती के परिवारों को बांटते हैं। यही तरीका वे किसी स्त्री-पुरुष की मौत पर करते हैं। इससे बस्ती के लोगों को मरने की सूचना मिल जाती है, दूसरे, जो कोई मांस, हंडिया में पका रहे हों, उस टुकड़े को भी उसमें डाल देते हैं और पकने पर खाते हैं। वे इसे पवित्र प्रसादी कहते हैं। ये बातें कई साल पहले की हैं, अब यह रिवाज खत्म हो रहा है।

दिगम्बर-पूजा

यहां पर एक और अजीब रिवाज है-इसे दिगम्बर पूजा कहते हैं। ११०० फुट की ऊंचाई पर एक स्थान है अलंक-रम आश्रम। यहां १६ आदिवासी-चार नौजवान लड़के,

चार युवतियां, चार बूढ़े और चार बूढ़ी औरतें बिलकुल वस्त्रहीन होकर पूजा करते हैं। ये लोग अग्नि जलाते हैं, साथ में, बलि के लिए बकरा या सूअर या कुत्ता ले जाते हैं। इस समय कोई दूसरा वहां नहीं जा सकता। इनका विश्वास है कि भगवान् ने हमें नंगा भेजा है इसलिए भगवान् की असली पूजा वस्त्र हीन होकर ही की जा सकती है, नहीं तो वह अधूरी और अपवित्र समझी जाएगी।पूजा के बाद वे जोर से एक आवाज देते हैं–शंकर जी महाराज ! क्या हमारी पूजा सफल हो गई? इसके बाद बलि का पशु अपने आप अपने प्राण छोड़ देता है। फिर उस जानवर को शंकर का प्रसाद समझ कर खाया जाता है।

पहरावा

पहाड़ी इलाकों में ये लोग कपड़े नहीं पहनते। केले के पेड़ के नीचे की छाल को अपनी कमर में बांधते हैं। इस पेड़ का एक चौड़ा सा छिलका आगे लटका देते हैं। आज कल भी ये लोग शहरों में लंगोट पहन कर आते हैं, और कुछ नहीं पहनते। सर्दी हो या गर्मी केवल एक ही लंगोट से काम चलाते हैं। औरतें भी एक ही वस्त्र पहनती हैं जो बगल के नीचे धोती की तरह बांधा जाता है। इससे ऊपर का भाग भी ढक जाता है। पहरावे में अभी तक उल्लेखनीय अंतर नहीं आया।

नागालैंड

नागा लोगों की मांग पर पहली दिसम्बर, १९६३ को आसाम में से काटकर सरकार ने नागालैंड प्रान्त बनाने का निश्चय किया। अलग प्रान्त बनाने के लिए बहुत ज़ोर से आन्दोलन चल रहा था। खैर, वह एक लम्बी कहानी है। इसका क्षेत्रफल १६४८३ वर्ग किलोमीटर है इसमें रहने वाली १० जातियां नागा कहलाती हैं। इनमें आग्रो, सेमा, अंगामी, लोथा, रेंगमां, आदि प्रमुख हैं। इन सब की बोल चाल की भाषा, रीति रिवाज अलग अलग है। आपस में अपनी भाषा और दूसरों के साथ आसामी भाषा बोलते हैं। इन लोगों को नाच गाने का बहुत शौक है। अधिकांश नागा इसाई धर्म को मानते हैं। नागालैंड की की राजधानी कोहिमा है परन्तु प्रसिद्ध तिजारती केन्द्र डीमापुर रेलवेस्टेशन है। नागालैंड में मैंने वैयक्तिक स्तर पर प्रचार किया। इस दिशा में मुझे सफलता अवश्य मिली परन्तु इस ओर बहुत प्रचार की अत्यन्त आवश्यकता है।

नागालैंड में ख़तरा

गोहाटी से डिब्रूगढ़ तक एक छोटी रेलवे लाईन है जो ५६१ किलोमीटर लम्बी है। आसाम मेल तथा दूसरी पैसंजर गाड़ियां बरुनी या लखनऊ से आती हैं। लखनऊ एक्सप्रेस तो गोहाटी खत्म हो जाती है बाकी गाड़ियां डिब्रू-

गढ़ जाती हैं। ऐसी गाड़ियों के आगे और पीछे एक एक डिब्बा फौजियों का होता है जिनके पास हर तरह के हथियार होते हैं। यही नहीं, हर डिब्बे के अंदर दो दो हथियारबंद सैनिक तैयार खड़े रहते हैं। असल में बाग़ी नागाओं के कारण स्थिति इतनी खराब रही है कि उनकी ओर से कभी भी कहीं भी शरारत हो सकती है। इसीलिए लमडिंग से सबलगूड़ी के दरम्यान कोई भी गाड़ी रात को नहीं चलाई जाती। कारण, रास्ते में नागालैंड के दो तीन स्टेशन आते हैं और नागालैंड की सीमा के साथ साथ रात को रेल गाड़ी चलाना खतरे से खाली नहीं है। गाड़ी के आने जाने का टाइम टेबल ऐसा बना रखा है कि गाड़ी रात को नागालैंड के इलाके या उसकी सीमा के पास से न गुजरे। अगर किसी दिन गाड़ी लेट हो जाए तो रात को सफ़र करने की बजाय इधर लमडिंग जंकशन पर और दूसरी तरफ सबलगूड़ी पर गाड़ी रोक दी जाती है। दूसरे दिन सुबह ४॥ बजे से पहले उसे वहां से नहीं चलाया जाता। गाड़ी के आगे आगे एक अलग इंजन चलता है। इंजन पहले ही अगले स्टेशन पर पहुंचकर खबर करता है कि मार्ग निष्कंटक है, तभी गाड़ी छोड़ी जाती है। विद्रोही नागा कोई न कोई गड़बड़ करते रहते हैं, पिछले दिनों उन्होंने किसी डिब्बे में टाइम बम्ब रख दिया था। वह डिफू स्टेशन पर फटा जिससे दो डिब्बे नष्ट भ्रष्ट

हो गए, कुछ व्यक्ति मारे गये, कुछ घायल हुए। कभी ये लोग गाड़ी लूट लेते है। इसलिए सरकार को सुरक्षा के पूरे प्रबंध करने पड़ते हैं।

खतरे की कई दुर्घटनाएँ

डीमापुर–मणिपुर रोड २३५ किलोमीटर लम्बी है। इसी सड़क पर नागालैंड की राजधानी कोहिमा है। यह सड़क भी खतरे से खाली नहीं। इस पर कई दुर्घटनाएं हो चुकी हैं। बस सुबह ७॥ बजे चलकर शाम ५ बजे मणिपुर पहुंचती है। बस चलने का एक ही समय है–सुबह का। वह भी एक नहीं तीन चार बसों का काफिला इकट्ठा चलता है। सेना से भरे ट्रक-जीपें सड़क पर गश्त लगाते रहते हैं। जब मैंने बारह दिन का परमिट लिया था उसके कुछ दिन पहले एक बस मणिपुर से डीमापुर जा रही थी। उसे नागाओं ने रोक लिया और मुसाफिरों की नकदी-कपड़े-जेवर सब कुछ लूट लिया। जिस बस में मैं सफर कर रहा था उसे भी रोकने की कोशिश की गई लेकिन ड्राइवर बड़ी होशियारी से बस को निकाल कर ले आया। यही नहीं, मणिपुर की धर्मशाला में जिस मारवाड़ी ठेकेदार ने मेरे भाषणों का प्रबन्ध किया था, उस का मुंशी ५ हज़ार रुपये लेकर अपनी गाड़ी में ४१-४२ मील दूर गया। वहां उसने मजदूरो को रुपया बांटना था। उसकी कार में एक और व्यापारी भी बैठा था जिसके पास ९५० रुपये थे।

कार के रुकते ही तीन नागा आए, पिस्तौल दिखाकर दोनों के रुपये छीन ले गए और उन्हे ज़ख्मी करके गिरा गए। पुलिस की गाड़ी से उन्हें मणिपुर लाया गया। रात को मैंने अपने आश्रम में उस मारवाड़ी ठेकेदार के साथ बहुत सहानुभूति प्रकट की और कहा कि ये सज्जन नुकसान उठा कर भी धर्मप्रचार में पूरा सहयोग दे रहे हैं। इतने में सत्संग में से एक आदमी खड़ा हो गया और कहने लगा कि इस इलाके की तो बात ही क्या है, यह इलाका बहुत खतरनाक हो चुका है। इसी तरह एक दिन एक आदमी ने बैंक में से ६० हजार रुपये निकलवाया। वह बाहर आया ही था कि लुटेरे रिवाल्वर दिखाकर सारी रकम उड़ा ले भागे। मैं जब डाकखाने से कार्ड-लिफाफे लेने गया तो मैंने देखा वहां सेना का पहरा लगा हुआ है।

जिस दिन शाम को ५ बजे के करीब मैं मणिपुर पहुँचा तो धर्मशाला के सामने एक होटल वाले से पूछा कि रात को भोजन किस समय तक मिलता है ? उसने उत्तर दिया—यहां होटल क्या, सारा बाजार सात बजे बंद हो जाता है इसी तरह कोहिमा का बाजार छः बजे बंद हो जाता है। सब लोग अपने अपने घरों में चले जाते हैं, चारों ओर सन्नाटा छा जाता है, जैसे घर-बाजार में कर्फ्यू लगा हो। अगर कोई दूकान गलती से खुली रह जाय तो शराबी, गुंडे या नागा सब कुछ लूट लेते हैं। सरकार की

भी आज्ञा है कि बाजार सात बजे तक बंद हो जाना चाहिए। ख़तरनाक इलाका होने के कारण मणिपुर में डाक बसों पर नहीं भेजी जाती। इस इलाके की डाक एक हवाई जहाज से सीधी कलकत्ता से लाई-ले जाई जाती है। वहीं से आगे बांटी जाती है।

आसाम में इसाई प्रचार

सारे आसाम का दौरा करने के बाद मैंने महसूस किया कि आसाम में इसाई प्रचार जोरों पर है। इसी सिलसिले में आसाम विधान सभा में एक ध्यानाकर्षण प्रस्ताव के उत्तर में श्री महेन्द्रमोहन, मंत्री, ने उत्तर दिया कि आसाम में से विदेशी पादरियों को निकाल दिया जाएगा। प्रचार का काम केवल भारतीय पादरी ही कर सकेंगे क्योंकि विदेशी गति विधियां सीमांत प्रदेश के लिए खतरनाक सिद्ध हो सकती हैं। इस निर्णय की तीव्र प्रतिक्रिया हुई। पादरियों के इशारे पर १७ अप्रेल १९६९ को शिलांग में १५ इसाई पादरियों ने एक शान्त जलूस निकाला गया जिसमें मांग की गई कि इन विदेशी पादरियों का निष्कासन आदेश वापिस लिया जाए। इस जलूस में ख़ासी, गारू आदिवासी इसाई भी सम्मिलित थे।

इसमें कोई संदेह नहीं कि विदेशी पादरियों की गतिविधि राष्ट्र सुरक्षा के लिए बहुत हानिकारक है। नियोगी कमीशन की रिपोर्ट ने प्रमाणित किया है ये लोग आदिवासी लोगों के

भोलेपन, सादगी, बीमारी, अशिक्षा का अनुचित लाभ उठा, लालच देकर उन्हें धर्म परिवर्तन के लिए मजबूर करते हैं। निश्चय ही इससे देश की सुरक्षा को खतरा है। इधर, इन्हें पाकिस्तानी घुसपैठियों तथा साम्यवादियों का भी समर्थन प्राप्त है।

इस समय आसाम के सीमांत प्रदेशों में २९७ विदेशी पादरी काम कर रहे हैं। गोलपारा तथा उत्तरी लखीमपुर के इलाके में १० साल में इसाई आबादी में ५३ प्रतिशत वृद्धि हुई। सन् १८९१ में समूचे आसाम में १५ हजार इसाई थे। सन् १९०१ में ३३५९५ हो गए। सन् १९५१ में ४,८७,३३१ हुए और सन् १९६१ में ७,६४५५३ इसाई हो गए। इससे पता चलता है कि जहां अंग्रेजी राज्य में आसाम में १० साल में केवल १० हजार संख्या बढ़ी वहां आजादी के बाद दस साल में ३ लाख की वृद्धि हुई। आश्चर्य होता है कि देश स्वाधीन होने के बाद इनका जाल ज्यादा फैला और ज्यादा लोगों को इसाई बनाया गया। पता नहीं सब कुछ सामने देखते हुए भी सरकार कैसे शांत बैठी रहती है! इन लोगों की ऐसी घातक गतिविधियों को देखकर ही सरकार ने ५ विदेशी पादरियों को निकलवाने का हुक्म दिया।

एक उल्लेखनीय बात यह है, आसाम के सीमांत

प्रदेश में तथा त्रिपुरा में मुस्लिम आबादी तीन गुना बढ़ गई है।

आसाम की भयंकर विस्फोटक स्थिति

मैं लगातार तीन मास तक आसाम, त्रिपुरा, नागालैंड मणिपुर का दौरा कर वापस आर्य वानप्रस्थ आश्रम ज्वालापुर लौट आया था। आसाम में मैं खूब घूमा। गोहाटी, शिलांग, डिफू, नामस्य, शेहिमा, जैसे बड़े बड़े नगरों के अलावा मैं आस-पास के कई छोटे मोटे कस्बों में गया। यहां कई प्रकार के लोगों से मिला, शहरी, स्थानीय, पंजाबी, आदिवासी बूढे बच्चे। यथासम्भव अधिक से अधिक लोगों से मिला, उनके आचार-विचार को जानने समझने की कोशिश की। यहां मैंने अपने लक्ष्य को कभी नहीं ओझल होने दिया। मैंने वैदिक सिद्धान्तों का प्रचार किया, वानप्रस्थ आश्रम से पर्याप्त मात्रा में वैदिक साहित्य मंगवाकर मुफ्त बांटा-भेजा।

यहां आकर सोचने-विचारने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा हूँ कि भारत सरकार की वर्तमान आंख मूंदने की नीति जनता और देश के हित को ध्यान से न रखने और असावधानी बरतने का परिणाम आसाम के लिए ही नहीं सारे देश के लिए कभी भी घातक सिद्ध हो सकता है। भारत की उत्तरी सीमा पर चीन छाया हुआ है।

उसकी कुदृष्टि का हमें अनुभव हो चुका है। इधर भारत की कमज़ोर नीति का लाभ उठाकर पाकिस्तान भी पूर्व-पश्चिमी इलाकों पर दांत निकाले हुए हैं। रूस की पनडुबियां हिन्द महासागर में गश्त लगा रहीं हैं।

जिस समय चीन ने तिब्बत पर कब्ज़ा किया था तो उस समय भारत चाहता तो अमेरिका से चीन की लड़ाई करवा सकता था लेकिन उस समय हम हिन्दी-चीनी भाई-भाई की मस्ती में झूम रहे थे। अपने राष्ट्रीय हित तक हमें नज़र नहीं आ रहे थे। मगर वह मौका हाथ से निकल चुका है। इस समय चीन विश्व की तीसरी शक्ति बन चुका है। वह अमेरिका और रूस से टक्कर लेने का सामर्थ्य रखता है। इसके प्रमाण उसने दिए भी हैं। आज वह लद्दाख में हमारे १४ हजार वर्ग मील पर कब्ज़ा किये हुए है और उसे खाली करने से इन्कार कर रहा है। हमारी उदार नहीं कमज़ोर सरकार ने चीन को खुश करने के लिए अपनी सीमा चार कद नदी से हटाकर कराकोरम पर्वत पर ले जाने की भारी भूल की है। चीन की नजर ब्रह्म-पुत्र वादी पर है। ब्रह्मपुत्र से स्टीमर गोहाटी-तेजपुर तक आ सकते हैं। समुद्री जहाज भी काफी अंदर ब्रह्मपुत्र नदी में आ जा मकते हैं। पाकिस्तान के चिट्टागांव बंदरगाह की राह से चीन के लिए सब तरह का युद्ध का सामान जल मार्ग से लाना कठिन नहीं। इधर, आसाम की

सीमाओं तक चीन नें सड़क तैयार कर रखी है। चीन के लिए आसाम के तेल के कुएं, मूल्यवान खनिज पदार्थ कम आकर्षण नहीं रखते। चीन आसाम के कण-कण से परिचित है। नागालैंड और मीज़ों के लोगों पर ज्यादा विश्वास नहीं किया जा सकता। इन लोगों की सहानुभूति चीन के साथ होते देर नहीं लगेगी। ऐसा लगता है कि सदियों की गुलामी की जंजीर तोड़ने के बाद जो आज़ादी हमें मिली है वह दूसरों की आंख का कांटा बनकर रह गई है। हमारी उन्नति देख कोई भी देश खुश नहीं है। हमने भरसक कोशिश की ताकि चीन और पाकिस्तान के साथ दोस्ती का हाथ बंधा रहे परन्तु हमें तो इन्हीं से विश्वासघात प्राप्त हुआ। सावधानी और सतर्कता स्वतंत्रता के मूलभूत नियम हैं—यह हमें कभी नहीं भूलना चाहिए।

३

हिमाचल प्रदेश की ओर

विदेश यात्रा पर जाते समय मैंने यह वचन दिया था कि वापस आने पर मैं हिमाचल प्रदेश की यात्रा करूंगा। इस वचन को निभाने के लिए मैं विचार कर ही रहा था कि मण्डी से श्री राम प्रकाश आनंद, प्रचार मंत्री, आर्य-समाज, का मुझे निमंत्रण मिला। उधर, ८ तथा ९ मई, १९७१ को शिमला में हिमाचल प्रदेश की आर्य सभाओं के प्रतिनिधियों की विशेष बैठक हो रही थी। उसमें भाग लेने के लिए भी मुझे निमंत्रण मिला। इसी बीच वानप्रस्थ आश्रम, ज्वालापुर की संन्यासी देवी माता आनन्दा भी मेरे पास आईं। उन्होंने भी शिमला-सभा में शामिल होने का आदेश दिया। इस तरह मुझे एक ऐसा अच्छा अवसर मिला जिससे मैं कई इच्छाएं पूरी कर सकता था। मैंने फैसला किया कि १ से ७ मई तक मैं मण्डी में प्रचार करूंगा और ८-९ मई को शिमला की बैठक में भाग लूंगा।

मण्डी के नए अनुभव

मैं ३० अप्रेल को मंडी पहुंचा। एक अर्सा पहले, मैंने यहां आर्य समाज का टूटा-फूटा भवन देखा था। उसके स्थान पर एक विशाल भवन बनाया गया है। उसके साथ कई दुकानें

भी हैं। इस सफलता के लिए मैंने आर्य जनों को बधाई दी।

यहां मेरा सात दिन प्रचार रहा। सभी दिन अच्छी हाज़री थी। नई परिस्थितियों में आर्यसमाज की आवश्यकता और उपयोगिता पर मैंने बल दिया। यहां मुझे इस इलाके के वयोवृद्ध नेता स्वामी कृष्णानंन्द जी से मिलकर बहुत प्रसन्नता हुई।

२ मई १९७१ को गीता मंदिर में भाषण देने का निमंत्रण मिला। जब मैं भाषण देने वहां पहुंचा तो वहां मंडी के महाराजा, जिन्हें आदर से सरकार कहा जाता है, पधारे हुए थे। मैंने गीता पर प्रवचन दिए, विचार-विनिमय हुआ, वे कुछ प्रभावित लगे। उन्होंने कहा कि मैं आपके उपदेश सुनने आर्य समाज मन्दिर में आऊंगा। दूसरे दिन महाराजा ने बड़ी उत्सुकता से भाषण सुना और इच्छा प्रकट की कि मैं कुछ समय निकाल कर उनके महल में आऊं और आध्यात्मिक विषयों पर विचार-विमर्श करूं। मैंने सहर्ष उनके आग्रह को स्वीकारा। दूसरे दिन ठीक समय पर गाड़ी भेज दी गई और मैं उनके महल में पहुंचा। मण्डी कोई बड़ी रियासत तो नहीं परन्तु महल अवश्य अच्छा शानदार हैं।

महाराज से देर तक बात चीत होती रही। वे हंसमुख और धार्मिक विचारों के व्यक्ति हैं। धर्म के सम्बन्ध में उनके प्रश्न और जिज्ञासाएं काफी प्रभावशाली थीं। उनकी राय में आर्यसमाज ही ऐसी संस्था है जो तर्क से

दूसरों को सहमत कर लेता है।

हिमाचल केन्द्रीय सभा का निर्माण

कार्यक्रम के अनुसार ८-९ मई को आर्यसमाज, लोअर बाज़ार में, सभा हुई। इस बैठक में हिमाचल केन्द्रीय आर्य सभा के नाम से एक संस्था बनाई गई जो इस प्रदेश में वेद प्रचार तथा अन्य गतिविधियों का संचालन करेगी। मैंने सभा को विश्वास दिलाया कि जहां तक बन पड़ा, मैं सभा की सदा सेवा करता रहूँगा।

संयोग और सौभाग्य से मुझे यहां तीन महान् तपस्वी, त्यागी महात्माओं से मिलने का अवसर मिला। उनसे सलाह मशवरा करने के बाद फैसला किया कि वे इस प्रदेश में बौद्ध भिक्षुओं की तरह प्रचार कार्य करेंगे।

इन तपस्वियों में एक बंगाली युवक हैं जो आर्य राज्य सभा के निष्ठावान् कार्यकर्ता हैं। आप का शुभ नाम है विनय जी। आप एक प्रतिष्ठित डाक्टर है और चक्षु रोगों के विशेषज्ञ हैं।

दूसरे सज्जन हैं श्री राजेन्द्र भारती। आप गुरुकुल कांगड़ी के स्नातक हैं। बहुत गंभीर एवं सुलझे हुए व्यक्ति हैं। आप पहले प्राध्यापक थे, वहां से त्यागपत्र देकर वेद-प्रचार के लिए आगे आए हैं। तीसरे, माता आनंदा देवी हैं। वे बालब्रह्मचारी हैं। इस समय उनकी आयु ६० वर्ष की है। आप पहले अध्यापिका थीं, बाद में सन्यास लेकर

सारा जीवन वेद-प्रचार के लिए देने का संकल्प ले चुकी हैं।

मेरे साथी शिमला से बिलासपुर चले गए। वहां उन्होंने कई भाषण दिए। मैं कुछ दिनों के लिए शिमला से कसौली आया। यहां की आर्य समाज का सिलसिला कुछ ढीला चल रहा था परन्तु अब काफी सुधार हो गया हैं। अब यहां की समाज अच्छे तरीके से कार्य कर रही है।

सुन्दर नगर की ओर

इधर १४-१५-१६ मई को नंगल आर्य समाज के उत्सव में शामिल होना जरूरी था। उनसे मेरे पुराने स्नेह संबन्ध हैं। वहां से मैं सुन्दर नगर चला गया। हमारी पार्टी के लोग भी बिलासपुर से सुन्दर नगर चले गए।

सुकेत के राजा ने कभी आर्यसमाज के प्रचार पर प्रतिबन्ध लगाया था। १६४० में मैं जब यहां प्रचार करने आया था उस समय बताया गया था कि यहां पहली बार आर्य समाज का प्रचार हो रहा है। अब हमने एक सप्ताह तक प्रचार कार्य किया। आर्य समाज का विशाल भवन बन रहा है, आशा है, उत्साही कार्यकर्ताओं की सहायता से वह शीघ्र पूरा हो जाएगा।

मनिकरण का गर्म चश्मा

मनिकरण हिमाचल का प्रसिद्ध स्थान है। इसकी मशहूरी का कारण है गर्म जल का चश्मा जो पार्वती नदी के

तट पर है। यह भूंतर हवाई अड्डे से २० मील दूर ऊंचे पर्वत पर स्थित है। कुल्लू आने वाले अधिकांश यात्री इस कुंड में स्नान करने, देखने और घूमने अवश्य आते हैं। इतने उबलते गर्म पानी का चश्मा भारत में कहीं नहीं है। चमड़ी के रोगी इस में स्नान कर अपने रोग दूर करने की आशा से आते हैं। इसमें संदेह नहीं कि इस पानी में स्नान करने से कई छोटे-मोटे रोग दूर हो जाते है। स्थानीय लोग तो इस पानी में भोजन तैयार करते हैं। एक पोटली में चावल और दूसरी में नमक-मसाले सहित दाल बांधकर रख दी जाती है। उबलते पानी में डाल इन पर पत्थर रख दिया जाता है। थोड़ी देर में दोनों चीजें तैयार हो जाती हैं। इसी तरह रोटियां बेल कर पानी में रख दी जाती हैं, थोड़ी देर में पक कर वे ऊपर आ जाती हैं।

यहां एक ठंडे पानी का चश्मा भी है। गर्म पानी को नाली से यहां लाया गया है। यहां स्नान की व्यवस्था की गई है। इस जगह सनातन धर्म सभा और गुरुद्वारा के झंडे लगे हुए हैं। एक केशधारी महात्मा यहां रहते है। सभी यात्रियों का वे चाय, भोजन से सत्कार करते हैं। खाने में ये सभी चीजें देते हैं–रोटी, चावल, कढ़ी, दाल, चटनी आदि। इनके कोई पैसे नहीं लिए जाते। अपनी इच्छानुसार दान देना चाहें, दीजिए, परन्तु लोगों से दान मांगा नहीं जाता।

कुल्लू आर्य समाज

मेरे दूसरे साथी पंडोह और मनिकरण ही ठहर गए मैं कुल्लू आ गया। यहां की अखाड़ा बाज़ार आर्य समाज बस अड्डे के पास ही है इसके विशाल भवन में सत्संग आदि के लिए एक हाल है और यात्रियों के ठहरने के लिए कई कमरे अलग से हैं। समाज के प्रधान एवं प्रबंधक स्वामी विवेकानन्द सरस्वती हैं। वे स्वयं समाज में ही रहते हैं। आप बहुत स्वाध्यायी तथा सुलझे हुए संन्यासी है। इनके साथ श्री राम सरन आनन्द, श्री रोशन लाल, श्री शिवभूषण विशेष उत्साह एवं सहयोग से आर्य समाज की सेवा कर रहे हैं।

यहां मैंने सात दिन व्याख्यान दिए। उनका यहां के लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

कुल्लू सुन्दर प्राकृतिक स्थान है जो महानदी व्यास के किनारे पर स्थित है। यहां आकर अद्भुत शान्ति एवं परम आनन्द की प्राप्ति होती है। पर कुल्लू की प्रसिद्धि उसके दशहरे के कारण है। यह त्यौहार अपने अनोखे ढंग से मनाया जाता है। प्रत्येक गांव का एक पृथक् देवता है। दशहरा त्यौहार पर इस देवता को पालकी पर बैठाकर ढालपुर मैदान में लाया जाता है। सभी देवता इकट्ठे होते हैं। बाजे-गाजे के साथ नाचते-गाते ये लोग अपने देवता को

रघुनाथ के रथ के पास ले जाते हैं। रघुनाथ कुल्लू के सब से बड़े देवता माने जाते हैं।

मनाली में

जिस दिन कुल्लू आर्य समाज में मेरा अन्तिम भाषण था उस दिन मेरे साथी भी कुल्लू पहुंच चुके थे। यहां सैलानियों की भीड़ होती है। अधिकांश लोग रात को मनाली से वापिस कुल्लू लौट आते हैं। मनाली में एक ओर बर्फ से ढके आकाश को छूते पर्वत हैं तथा दूसरी ओर उनकी गोद में कलकल नाद करती व्यास नदी बहती है। प्राकृतिक दृष्टि से मनाली अपने सौंदर्य एवं आकर्षण में अद्वितीय है।

मनाली के आस पास कई दर्शनीय स्थान हैं परन्तु उनमें वाशिष्ठ कुंड का अपना महत्त्व है। यह मनाली से तीन मील दूर है। यहां भी उबलते पानी का एक कुंड है। ऐसा लगता है जैसे इस कुंड के नीचे कोई ज्वालामुखी धधक रहा हो। इस कुंड को १७ सौ साल पहले महाराजा लक्ष्मी पाल ने बनाया था। इसी स्थान पर महर्षि वशिष्ट ने तपस्या की थी।

देविका रानी से भेंट

यहां मेरी भेंट प्रसिद्ध फिलम अभिनेत्री देविकारानी से हुई। उनके साथ कई विषयों पर बातचीत हुई। मैंने उन्हें आर्यसमाज और स्वामी दयानन्द के विचारों के बारे में

बताया। उन्होंने पर्याप्त उत्सुकता दिखाई और विश्वास दिलाया कि वे सत्यार्थ प्रकाश का अध्ययन करेंगी और यथासंभव आर्यसमाज की सहायता करेंगी।

देविका रानी ने अपने बीते जीवन के कई संस्मरण सुनाए। उनकी राय में आज फिल्मी दुनिया में केवल दिखावा है, पहले कला-साधना अधिक थी।

यहीं पर हमें हिमाचल के राजस्व मंत्री श्री लालचन्द परार्थी ने चाय पर बुलाया। परार्थी जी अच्छे सुलझे हुए नेता हैं, काफी कुछ करना चाहते हैं। उनके साथ कई तत्कालीन विषयों पर बातचीत हुई।

रोहतांग-दर्रा

मनाली में प्रचार करने के बाद हम सबने फैसला किया कि रोहतांग दर्रा की बर्फीली चोटियों पर चला जाए। यह वह दर्रा है जहां से गुजर कर लाहौल-स्पिति जाया जाता है। यह दर्रा अक्सर बर्फ से ढका रहने के कारण बंद रहता हैं। ग्रीष्म ऋतु में बर्फ पिघलने से वह खुल जाता है। यहां बरसात में बारिश नहीं बर्फ गिरती है। पहले बस राहला तक जाती थी, फिर मढ़ी तक जाने लगी पर इस वर्ष से बसें रोहतांग की चोटी के पास व्यास कुंड तक जाती हैं।

मनाली से रोहतांग तक यात्रा करने के लिए काफी

गर्म कपड़े पहनने पड़ते हैं। कुछ दूर जाने के बाद चारों ओर बर्फ ही बर्फ दिखाई देती है। कई यात्री बाहर हाथ निकालकर बर्फ उठा लेते हैं और उसका गोला-सा बनाकर चूसते हैं। यह केवल २-३ मील का फासला है पर बस का भाड़ा (आने जाने का) १८ रुपया है।

सर्दी अधिक होने के कारण मौसम में कुछ ऐसी खराबी आ जाती है कि नाक-कान पर काले से दाग पड़ जाते हैं। वैसे, ये बाद में दूर हो जाते हैं। हमारे साथ कुछ विदेशी भी थे। कुछ ने नाक पर प्लास्टिक की पट्टी-सी लगा रखी थी। हम ११ बजे रोहतांग पहुंचे। वहां के प्राकृतिक सौन्दर्य को देख बहुत प्रसन्नता हुई। मैं तो बस उसमें ही खो सा गया। कुछ लोग बर्फ से खेलने लगे।

यहां एक छोटा सा मन्दिर है। उसके चारों ओर ओ३म, चांद, तारा, क्रास और बुद्ध मतों के धर्म चिन्ह लगे हुए हैं। यहां कुछ बोर्ड लगे हुए हैं। एक में लिखा था -यदि आप विवाहित हैं तो तेज चलना छोड़ दीजिए। दूसरे में लिखा था—मनाली वापस जाने वाले या लाहौल स्पिति जाने वाले दो बजे से पहले यहां से चले जाएं। दो बजे के बाद इतनी तेज़ आंधी शुरु हो जाती है कि कोई ठहर नहीं सकता। पिछले दिनों भेड़ चराने वाले गद्दी इस तेज़ हवा में ऐसे उड़े कि आज तक उनका कुछ निशान तक न मिल सका।

कोकसर में

व्यास कुंड से हमने आगे जाने का फैसला किया। यह पगडंडी खतरनाक है। हम चलते चलते सायं दो बजे एक गांव कोकसर पहुंचे। हम चलते चलते व्यास नदी के ऊपर पहुंच गए। यहां हमने देखा कि एक नदी उल्टी तरफ बह रही है। पता लगा कि यह चन्द्र नदी है। इससे आगे जाकर भागा मिलती है, तब दोनों मिलकर चन्द्रभागा (चिनाब) बन जाती है।

कोकसर से कीलिंग तक एक छोटी बस जाती है। कीलिंग लाहौल स्पिति का मुख्य स्थान है। यहीं सरकारी दफ्तर और हाईस्कूल हैं। पुलिस और सेना की व्यवस्था यहीं से होती है। यहां के हाईस्कूल में मेरा भाषण हुआ। जनता में भी प्रचार कार्य किया गया।

यहां सब्जियां और घास तक कुछ-भी नहीं होता। यहां चरु नाम का एक पशु होता है जो हल में भी जोता जाता है। वह दूध भी देता है।

यहीं आकर सुना कि महान् क्रान्तिकारी रास बिहारी बोस ने यहां कई वर्ष गुज़ारे थे।

जीवन खतरे में

हम बस से वापस कोकसर पहुंचे। यहां से ८-९ मील सीधी चढ़ाई थी। रात का समय था। हम रास्ता भूल

गए । कभी एक मील इधर कभी दूसरा मील उधर भटक रहे थे । कोई रास्ता नहीं मिल रहा था और न कुछ सूझ ही रहा था । हम सब अपने को खतरे में समझ रहे थे । इतने में, ईश्वर की अपार कृपा समझिए, लोक कार्य विभाग का एक कर्मचारी मिल गया । जान में जान आई । उसने रास्ता बताया और कहा–आप जिस गांव में ठहरना चाहते थे, वह तो तीन मील पीछे रह गया है । उसके पथ निर्देशन से हम गांव पहुंचे और आराम से रात गुज़ारी ।

सुबह उठते ही हमने रोहतांग की चोटी पर चढ़ना शुरु कर दिया । ११ बजे हम वहां पहुंच गए । रोहतांग से हमें बस मिली और हम मनाली वापस आ गए । कुल्लू आकर आर्य समाज में ठहरे और प्रचार कार्य किया । यहां महातमा आनंद स्वामी जी महाराज पधारे हुए थे । पंजाब के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री भीमसेन सच्चर ने अपने स्वर्गीय पुत्र विजय की पुण्य स्मृति में यज्ञ कराने का संकल्प किया था । यज्ञ कराया गया । उसके बाद जोगेन्द्र नगर और कांगड़ा होता हुआ मैं जालधंर लौटा ।

पिछड़ा प्रदेश

मैंने जिन लोगों में वैदिक धर्म का प्रचार किया, उनके संस्कारों को और सुधारने की आवश्यकता है । यहां काफी प्रचार कार्य होना चाहिए । ये लोग पिछड़े हुए हैं । इनको

प्यार और हमदर्दी से सुधारा जा सकता है। इस यात्रा की अमिट स्मृति है यहां की प्राकृतिक सुन्दरता, विशेष रूप से रोहतांग से आगे की। इसके साहसपूर्ण कड़वे-मीठे अनुभव कभी नहीं भुलाए जा सकते।

पड़ोसी देश:

मिश्रित परंपराओं का देश :
थाई देश
एशिया का गौरव : सिंगापुर
इस्लामी परंपराओं में बंधा :
मलेशिया
हिमालय की गोद-नेपाल में

४

मिश्रित परम्पराओं का देश : थाई देश

आसाम और नागालैंड की यात्रा के बाद मेरा मन सुदूर पूर्व के लोगों को समझने-जानने के लिए उत्सुक होने लगा। मेरी विदेश-यात्रा थाई-देश से ही प्रारम्भ हुई। भारत से हज़ारों मील दूर नए और पुराने संस्कारों से उलझता-सम्हलता थाई देश मुझे बहुत आकर्षक लगा। कलकत्ता से साढ़े तीन घंटे की उड़ान के बाद जब हमने बैंकाक हवाई-अड्डे पर कदम रखा तो उतरते ही एक महिला ने कोमल एवं मधुर आवाज़ में कहा "सभी यात्री मेरे साथ 'कस्टम-कार्यालय' की ओर चलें।" जब तक हम वहां से फारिग होकर कार में बैठे नहीं, वह महिला छाया की भांति हमारे साथ रही। यात्रियों की देख भाल और सेवा-टहल का सारा काम लड़कियों के हाथ में देख कर इस देश का पहला अनुभव सुखद रहा।

कलकत्ता से बैंकाक तक का मेरा हवाई सफर बहुत मधुर रहा। इंडियन एयर लाइन्ज़ के जिस जहाज़ में मैंने यात्रा की, वह इतना बड़ा था कि उसमें डेढ़सौ यात्री सवार थे। हवाई जहाज़ में दाखिल होते समय एयर

हौस्टेस ने 'स्वागतम्' या नमस्ते कहा। यात्रा के दौरान



कलकत्ता से हवाई जहाज़ द्वारा विदेश यात्रा शुरु करने से पूर्व श्री नन्द-लाल जी वानप्रस्थी के साथ श्री शिवलाल भाटिया—इस कार्यक्रम के प्रेरक

उसका खाने-पीने के लिए पूछना, छोटी मोटी हिदायतें देना, सहायता करना स्मरणीय रहेगा। उसके स्नेह-स्निग्ध व्यवहार से यात्रा सुखद हो गई।

भारत से श्री शिवलाल भाटिया मेरे साथ आए थे। हम दोनों बैंकाक हवाई अड्डे से उनके भाई श्री जोगिन्दर पाल भाटिया के मकान पर पहुंचे। यहां हमारे ठहरने का प्रबंध किया गया था। श्री जोगिन्दर पाल और उनकी धर्मपत्नी श्रीमती जनक दुलारी का निश्छल सेवाभाव आजीवन याद रहेगा।

प्रवासी हिन्दुओं में उत्साह

यहां का भारतीय पर्याप्त सम्पन्न होते हुए भी धर्म के प्रति निष्ठा एवं आदर भावना में कम नहीं है। इसी लिए तो हज़ारों मील की यात्रा पूरी कर मुझे उनकी धर्म पिपासा शान्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। यहां प्रतिदिन सत्संग की व्यवस्था की गई। इसलिए मुझे देव मंदिर में ही ठहराया गया। मेरे भाषणों के प्रति भारतीयों की रुचि एवं उत्सुकता कम नहीं थी। सत्संगी प्राय: टेप रिकार्डर साथ लाते थे, श्रद्धा से व्याख्यान टेप करते थे ताकि बाद में उन व्याख्यानों का अधिक से अधिक लाभ उठा सके। यहां प्रत्येक रविवार को विशेष सत्संग होता है और उसमें उपस्थिति इतनी अधिक होती है कि मैंने

भारत की किसी समाज में इतनी हाज़री नहीं देखी । बैंकाक



आर्य समाज बैंकाक के सदस्यों तथा नागरिकों द्वारा श्री नंदलाल वान-
प्रस्थी की भावपूर्ण विदाई

में ९ अगस्त को मेरा अंतिम भाषण था। जनता में मुझे विशेष उत्साह और उल्लास दिखाई दिया। बाहर कम से कम २५-३० मोटर कारें खड़ी थीं। मुझे यहां इस बात की अक्सर आशंका लगी रहती थी कि मैं हज़ारों मील दूर प्रचार कार्य के लिए आया हूं, सारा आर्य जगत् मुझसे कुछ अपेक्षा रखता है। परन्तु अन्तिम समारोह को देख मेरी आशंका दूर हो गयी। प्रभु की अपार कृपा और जनता-जनार्दन के आशीर्वाद से मुझे आशा से अधिक सफलता मिली।

बैंकाक-आर्य समाज की स्थापना

मुझे यह जानकर कुछ आश्चर्य और अधिक प्रसन्नता हुई कि बैंकाक में आर्यसमाज की स्थापना १९१७ ई० के आस पास हो गई थी। इस योजना को पूरा करने का श्रेय गोरखपुर-आजमगढ़-फैज़ाबाद-बलिया के उन उत्साही युवकों को था जो यहां दरबान का काम करते थे। ये थोड़े पढ़े लिखे थे परन्तु पढ़ाई से कहीं अधिक इनकी रुचि सत्संग हवन-यज्ञ-उपदेश में थी। इस दिशा में महाशय छांगुसिंह, पं० सरजूतिवारी, रामदेवसिंह, रामप्रताप, इन्द्रदेवसिंह, रामबल्लीसिंह की सेवाएं उल्लेखनीय हैं। इनके मार्ग में कई तरह की रुकावटें आईं, सनातनी भाइयों ने कई उचित अनुचित साधनों द्वारा इस अनुष्ठान को नष्ट-भ्रष्ट करना

चाहा पर इन लोगों की निष्ठा एवं कर्मठता से आर्य समाज मंदिर तो बना ही, प्रारम्भ में ही आर्य सभासदों की संख्या १६० के लगभग हो गई। ये 'पुरबिए' साधारण औकात के थे परन्तु इनकी धर्म के प्रति श्रद्धा एवं सेवा भावना असाधारण थी। स्याम में प्रायः सभी लोग मांस मदिरा खाने-पीने लगते हैं, भारतीयों को भी ये आदतें पड़ जाती हैं परन्तु यह गौरव का विषय है कि ये सभी सभासद इन व्यसनों से अछूते रहे। स्वामी दयानन्द और वैदिक धर्म की महिमा की जैसे इन्होंने रक्षा की, वैसी अन्यत्र दुर्लभ है। परिणामस्वरूप इन लोगों का प्रभाव और भी बढ़ गया।

मेहता जैमिनी की लोकप्रियता

इधर, सनातन धर्मी लोगों के प्रचारक सदाचार तथा धार्मिक संस्कारों के बारे में विशेष आग्रह नहीं करते थे, इसके विपरीत ये लोग आर्य समाजी नियमों के पालन के बारे में सजग एवं प्रयत्नशील थे। यही नहीं, इस सिलसिले में ये भारत से जाने-माने महात्माओं-स्वामियों को पुष्कल दक्षिणा-सत्कार देकर आमन्त्रित करते थे। मेहता जैमिनी वैदिक मिश्नरी संभवतः पहले प्रचारक थे जो वैदिक धर्म के प्रचार-प्रसार के लिए १९२३-२४ ई० में वहां पहुंचे। उनके प्रवचन इतने सरल, विचारपूर्ण एवं प्रभावशाली थे कि उनकी प्रसिद्धि राजदरबार तक पहुंची। जो सनातन धर्म

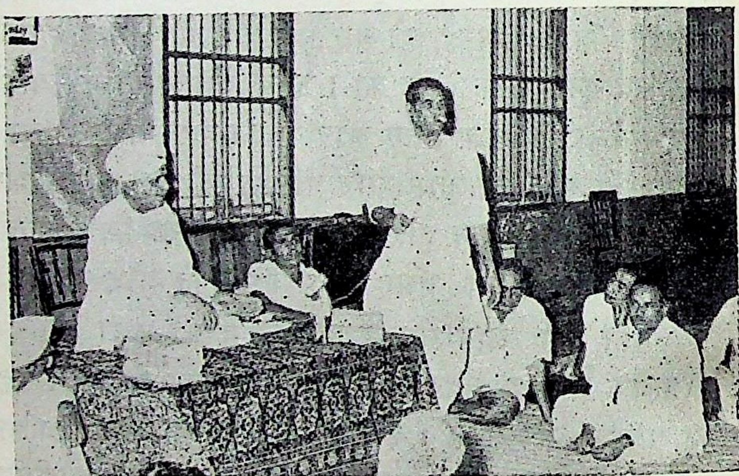
सभा आर्यसमाज को पददलित करने के लिए प्रयत्नशील थी, अब, उन्हीं के अधिकारियों ने मेहता जी को अपने यहां उपदेश देने के लिए आमंत्रित किया। उस समय के राजा से भी मेहता जी का वैदिक तथा बौद्ध धर्म के सम्बन्ध में विचार-विमर्श हुआ। मेहता जी के उपदेशों से महाराज आनन्द मुग्ध हो गए। मेहता जी ने उन्हें स्वामी दयानन्द की पुस्तकें भेंट की। उनके व्याख्यानों के स्यामी और अंग्रेज़ी में अनुवाद हुए और उनका बहुत प्रचार हुआ। मेहता जी की सफलता और प्रसिद्धि को देख मुझे विशेष बल मिला। मैंने मन ही मन सोच लिया था कि मैं उनके कदमों पर चलता हुआ अपने लक्ष्य की ओर बढ़ूंगा।

यहां की आर्य समाज का हाल काफी खुला है। इस में प्रत्येक सप्ताह हवन, संध्या और प्रवचन होते हैं। यहां का प्रबन्ध अच्छा है। इस आर्य समाज में स्वामी ध्रुवानन्द जी, महात्मा आनन्द स्वामी जी, श्री प्रकाशवीर शास्त्री जी, श्री वीरेन्द्र जो, श्री नरेन्द्र जी जैसे नेता अपने भाषण दे चुके हैं।

प्रवासी हिन्दूः प्राचीन धर्म की कड़ी

मैंने यहां के भारतीयों को समझाया कि वे इस देश में केवल धन कमाने और जोड़ने के लिए नहीं आए हैं। उन्हें इस देश के धार्मिक, सामाजिक और राजनैतिक विकास में यथासंभव सहयोग देना चाहिए। यहां के लोग उनके

लिए विदेशी नहीं हैं। उन्हें वे अपना समझें और उनमें अपना बनकर रहें, नहीं तो, ये लोग आपको शोषक समझेंगे और आप से घृणा करेंगे। तब आपका यहां रहना या धन कमाना असभव हो जाएगा।



श्री नन्दलाल जी वानप्रस्थी आर्य समाज बैंकाक के अधिकारियों के साथ विचार-विमर्श करते हुए

वैसे भी भारत को यह गौरव प्राप्त है कि इन देशों में वह अपनी संस्कृति का प्रचार करता रहा है। यहां के भारतीय उसी परम्परा की कड़ी है। धन तो वे पुरुषार्थ से कमाएंगे ही, परन्तु त्याग और सद्भावना का प्रचार वैसे ही करेंगे जैसे शताब्दियों पहले किया गया था। इन भारतीयों को उन्हीं उज्ज्वल परम्पराओं का निर्वाह करना

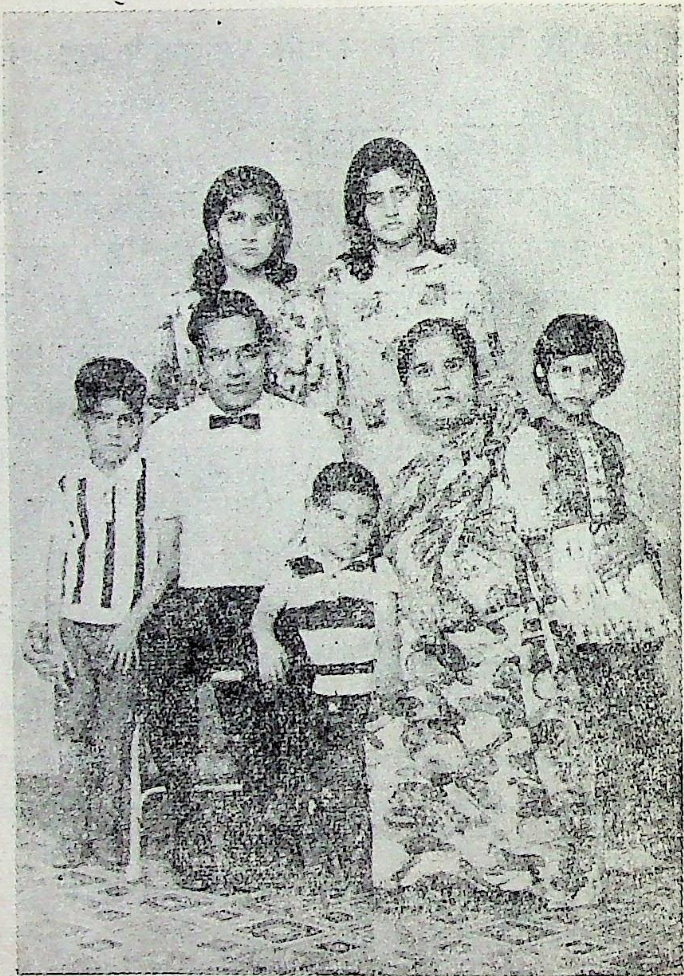
चाहिए और फिर मैं भी तो इसी प्रयोजन से यहां आया हूं।

प्रवासी हिन्दू: पंजाबी

यहां लगभग २५-३० हज़ार भारतीय हैं। इनके तीन वर्ग हैं। प्रथम स्थान पंजाबी हिन्दू-सिखों का है। इनमें से अधिकांश स्यालकोट और कुछ गुजरांवाला ज़िला के रहने वाले हैं। भारत के विभाजन के बाद पंजाबी अधिक संख्या में यहां आकर बस गए। इन्होंने पुरुषार्थ एवं परिश्रम से जल्दी ही अपनी स्थिति सुधार ली। शुरू-शुरू में जब ये लोग स्याम आए, तो ये यहां की न भाषा जानते थे और न रीति रिवाज़। खाना-पीना वैसे अनुकूल नहीं था। और ये विशेष पढ़े लिखे भी न थे पर गठरियां कंधे पर रख कर, गांव-गांव घूम कर कपड़ा बेचते थे। अब ये कपड़े के बहुत बड़े व्यापारी हैं। आज ये लोग बहुत सम्पन्न हैं। तीन चौथाई लोगों के पास अपनी मोटर कारें हैं, टेलिविज़न हैं, बड़े-बड़े मकानों के मालिक हैं। सचमुच लक्ष्मी इनके द्वार पर हाथ बांधे खड़ी है!

बैंकाक-देवमंदिर

इनका आपस में अच्छा मेल-मिलाप तथा संगठन है। धंधे में; दु:ख-सुख में एक दूसरे की पूरी सहायता करते हैं। अच्छे कामों पर तो खूब खर्च करते हैं। इन्होंने यहां एक



पकनमपोह के रईस और श्री नंदलाल वानप्रस्थी के आत्मीय श्री जगदीश चन्द्र पाहवा, सौभाग्यवती श्रीमती राजरानी तथा उनका परिवार, जिनकी सहायता सदा स्मरणीय रहेगी।

विशाल देव मन्दिर बना रखा है जिस पर लगभग ३२ लाख टिकल खर्च हुआ है। इसमें पूजा-पाठ की सुन्दर व्यवस्था है। दूसरी मंजिल पर इतना बड़ा हाल है कि ५०० आदमी एक साथ मिलकर खाना खा सकते हैं। भारतीय विद्यालय के नाम से यहां एक हाई स्कूल तथा थाई-भारत संघ की तरफ से एक पुस्तकालय चल रहा है। यहां हिन्दी पढ़ाने का भी प्रवन्ध किया गया है।

इस मन्दिर में और आर्य समाज मन्दिर में मैंने कई भाषण दिए। इस मन्दिर के पुजारी श्री हरबंस लाल शर्मा हैं। ये अमृतसर के रहने वाले हैं। उक्त स्कूल के प्रिंसिपल श्री चमन लाल जोशी भी अमृतसर के हैं। मेरे बचपन के साथी स्वर्गीय पंडित रघुनाथ शर्मा शास्त्री के पुरुषार्थ तथा दानी-स्वभाव का ही यह फल है कि सारे थाईलैंड राजदरबार तक में, उनका यश तथा सम्मान है। यह मंदिर यह स्कूल, पुस्तकालय आदि उनकी सतत साधना के परिणाम हैं।

इस मन्दिर में प्रतिदिन प्रातः कीर्तन तथा रामायण का पाठ होता है। प्रातः सत्संग के बाद सभी नर नारियों का चाय-मिठाई से सत्कार होता है और प्रति मास प्रीति भोजन होता है। यहां एक गुरुद्वारा भी है। इसके ग्रंथी अच्छे विद्वान् तथा सरल स्वभाव के व्यक्ति हैं।

ज़िला स्यालकोट के भाटड़े भी ज्योतिषी बनकर आज

कल घूमते फिरते नज़र आते हैं। यहां भी भोली-भाली जनता का हाथ देखकर ये अपने हाथ गर्म करते हैं।

गुजराती-मारवाड़ी

दूसरे वर्ग में गुजराती-मारवाड़ी हैं। ये सब सोना-चांदी का व्यापार करते हैं। इनकी सर्राफे और जेवरात की बहुत दुकानें हैं। यहां सोना अपेक्षाकृत सस्ता है, इस लिये हर विदेशी थाइलैंड से जेवर बनवा कर साथ ले जाना चाहता है। आभूषणों पर कोई प्रतिबन्ध नहीं। इस लिए इन लोगों को अपने कारोबार में बहुत आमदनी है। ये लोग बहुत सम्पन्न एवं धनी हैं।

उत्तर प्रदेश के पूर्वी-निवासी

तीसरा स्थान है उत्तर प्रदेश के पूर्वी ज़िलों के निवासियों का। ये वे लोग हैं जो बरमा से पैदल चलकर यहां आए थे। ये लोग दूध बेचने का धंधा या चौकीदारी करते हैं। इनमें से कुछ सफल लोग साहूकारा भी कहते हैं परन्तु अधिकांश सरकारी, गैर-सरकारी दफ्तरों, कॉलेज या कम्पनियों, बड़ी-बड़ी दुकानों या बंगलों के आगे खाकी पोशाक में दरबान का काम करते हैं। ये लोग मेहनती और ईमानदार हैं। इस लिए ये जनता के विश्वास पात्र हैं। इनमें से कुछ एक बहुत पैसा बनाने लगे हैं परन्तु इनकी शिक्षा, रहन-सहन, खान-पान में कोई उल्लेखनीय अन्तर नहीं आया।

इसलिए इनमें कुछ पिछड़ापन बना हुआ है।

मूल निवासी

मैं बैंकाक में दो सप्ताह रहा। कई भारतीयों से तो मिला ही परन्तु यहां के मूल निवासियों के रहन-सहन, आचार-विचार के बारे में मेरी रुचि कम नहीं थी। मैं उत्सुकता के साथ उनके बारे में अधिक से अधिक जानने के लिए तत्पर रहता था। इस लिए मुझे कई विस्मयकारी बातें दिखाई दीं।

प्रत्येक क्षेत्र में नारी का सम्मान

मैंने पढ़ा था कि जिस समाज में नारी की पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं! सचमुच थाइलैंड में देवता निवास करते हैं। हवाई अड्डे पर उतरते समय जो सुखद अनुभव मुझे हुआ वह धीरे-धीरे दृढ़ होता गया। आज वापसी के समय मुझे लगा कि इस समाज की रीढ़ स्त्रियां हैं। समाज का ढांचा ही इस प्रकार का बना हुआ है कि महिलाएं सर्वत्र आगे मिलेंगी, चाहे घर हो या बाहर! बैंकाक में किसी तरफ मुंह कर लीजिए, चाहे सब्ज़ी मंडी हो या मनियारी या बजाजी का धंधा या सरकारी या गैर-सरकारी दफ्तरों के कार्यालय, आपको स्त्रियां ही काम करती दिखाई देंगी। यहां तक कि गली-बाज़ारों में बैंहगी उठाकर सामान बेचने वाली अधिकांश स्त्रियां ही है।

फुर्ती और मस्ती

बैंकाक के मंच से स्त्रियां हटा ली जाएं तो सारा बैंकाक निष्क्रिय एव गतिहीन हो जाएगा। नीरस तो, खैर, होगी ही। सभी क्षेत्रों में महिलाएं अग्रणी हैं। कर्मठ और उद्यमी होने के कारण ये अपने काम-काज तथा विचारों में स्वतंत्र हैं। किसी प्रकार की कुंठा या अबला समझने की हीन भावना छू तक नहीं गई। वैसे तो आज के जीवन की कठिनाइयां या समस्याएं किसको अशांत नहीं करती परन्तु आश्चर्य है कि ये महिलाएं सदा मुस्कराती मिलती हैं। इनकी लोक प्रियता का रहस्य है– फुर्ती और मस्ती !

कर्मठ और आत्म-निर्भर

मुझे ऐसा महसूस हुआ कि जैसे भारत में पुरुष का कमाना ज़रूरी है, उसी तरह थाइलैंड में स्त्री का कमाऊ होना आवश्यक है। इसलिए पढ़ाई लिखाई, मैडिकल शिक्षा, दस्तकारी के केन्द्र, सब में महिलाओं की संख्या अधिक है। रेलवे स्टेशनों के स्टालों, फलों-मछलियों की दुकानों पर आपको महिलाएं नजर आएंगी पर खेती बाड़ी में भी वे पीछे नहीं हैं। इस प्रकार थाई महिला आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से आत्म-निर्भर ही नहीं स्वतंत्र भी हैं।

शारीरिक गठन तथा पहरावा

थाई महिलाओं की शरीर रचना मंगोलियन जाति से जुड़ी

हुई है । इसलिए इनकी नाक चपटी तथा आंखें पतली हैं । इनका कद कुछ छोटा, बाल गर्दन तक कटे जिन्हें आज की भाषा में 'बॉब कट' कह सकते हैं, उजला-साफ़ रंग तथा मुस्कराता चेहरा स्यामी महिला की गरिमा को उजागर करता है । पहरावे और रहन सहन में सफाई और सजावट का इतना मोह है परन्तु स्वयं गहने पहनने का कोई शौक नहीं । अब घड़ी पहनने का रिवाज बढ़ रहा है अन्यथा जेवर नाम की चीज़ से अधिकांश महिलाएं अपरिचित ही हैं । इनके कपड़े हल्के-फुल्के हैं। बुशर्ट-टाइप ब्लाउज़, स्कर्ट या अब स्लैक्स पहने वे निस्संकोच घूमती हैं । अधिकांश औरतें लुंगी जैसा कपड़ा बांधती हैं । वास्तव में थाई महिलाओं में कोमलता और कठोरता, आंतरिक प्रफुल्लता तथा कार्य शक्ति, चिन्ता रहित खिला हुआ चेहरा तथा कर्त्तव्यनिष्ठा का समुचित समन्वय स्थान-स्थान पर मिला है ।

स्वच्छन्द आचार व्यवहार

सहज-स्वाभाविक खुले वातावरण में जीने के कारण महिलाओं की जीवन दृष्टि भी वैसी है-कमाओ और खाओ। अपने निजी जीवन में वे काफी आज़ाद हैं । उन पर नैतिक और पारिवाकि बन्धन या मर्यादाओं का बोझ नहीं है । लड़के लड़कियों के मेल-मिलाप, उठना-बैठना, स्कूल-कॉलेज या अन्यत्र सहज रूप में होता रहता है । यहां तक कि लड़कियों

के मित्र लड़की के माता-पिता के सामने निस्संकोच घर आते-जाते हैं । इन परिस्थितियों में राह चलती लड़कियों पर आवाजें कसना, छेड़खानी करना जैसी बातेंय हां नहीं होतीं। लड़के-लड़कियों का स्वच्छन्द मिलना-जुलना ही जीवन-साथी के चुनाव में सहायक होता है । यदि लड़के लड़की में बात बनती नज़र आएं तो दोनों घर से निकल जाते हैं । वापस आकर माता-पिता के चरण छूने से स्पष्ट हो जाता है कि वे विवाह के लिए तैयार हैं । विवाह की रस्म बौद्ध भिक्षु द्वारा सम्पन्न होती है । जीवन साथी के चुनाव में जितनी आजादी है उतनी ही साथी छोड़ने, तालाक लेने में भी है । इसे बुरा नहीं माना जाता । इसी प्रकार यदि पुरुष के लिए नैतिक या पारिवारिक या सामाजिक अपराधों की छूट है या क्षम्य हैं तो ठीक उसी तरह स्त्री के लिए भी वही नियम लागू होते हैं । भारत में स्त्री–पुरुष के मानदंड़ों में बहुत अंतर है । यहां ऐसा नहीं है । स्पष्ट है, समाज में लड़के लड़की में कोई भेद नहीं है । इसलिए मां बाप को लड़के-लड़कियों के विवाह की कोई चिन्ता नहीं है ।

प्रेरणा भूमिः भारत

इस देश में पहुंच कर अपनेपन और आत्मीयता का भाव जगता है क्योंकि इस देश की सांस्कृतिक विरासत और प्रेरणा भूमि भारत है । अनजाने में आप सैकड़ों साल

पहले उन भारतीयों से सम्बन्ध जोड़ लेते हैं जो यहां अपनी संस्कृति का प्रचार और प्रसार के लिए आए थे और इन लोगों को नई जीवन-दृष्टि, नई आध्यात्मिक चेतना प्रदान कर गये थे। क्या मेरा उद्देश्य उन प्रचारकों से भिन्न है? और फिर, अपने दो सप्ताह के प्रवास में मैंने भारतीय संस्कृति के कई स्मरण चिह्न यहां देखे। इस देशका राजधर्म बौद्ध धर्म है और राजा से लेकर रंक तक सभी इसके पालन में गर्व महसूस करते हैं। इस देश में स्थान स्थान पर विहारवाट (मन्दिर) हैं। शहरों और गांवों में फैले हुए ये मन्दिर धर्म के संतरी का काम देते है, जनता को सदा याद दिलवाते हैं कि तप और त्याग के बिना निर्वाण संभव नहीं।

बौद्ध-भिक्षु

जैसे प्रत्येक स्यामी को दो वर्ष के लिए अनिवार्य रूप से सैन्य प्रशिक्षण लेना पड़ता है वैसे ही प्रत्येक थाई को जीवन में एक बार पीले कपड़े पहन, रुंड-मुंड हो नंगे पांव भिक्षु बनना पड़ता है। अमीर और ग़रीब की तो बात ही क्या, स्वयं महाराजा को भिक्षुक बन कर जगह-जगह भीख मांगनी पड़ती है। सुबह सुबह सड़कों पर आप को सौम्य-सुन्दर पीली मूर्तियां घूमती दिखाई देती हैं तो ऐसा लगता है कि सारा शहर नए अलौकिक प्रकाश से मंडित हो रहा

है। इस वातावरण का मन पर अच्छा प्रभाव पड़ता है। इधर, प्रत्येक गृहस्थी भिक्षुओं का श्रद्धा भाव से सम्मान प्रणाम करते हैं और दान-दक्षिणा, भोजन-कपड़ा देकर गौरव महसूस करते हैं। एक दिन मैं भी संध्या-हवन से निवृत्त होकर द्वार पर बैठ गया। मेरे पास उबले चावल और १८ दूध के डिब्बे थे। मैं प्रत्येक भिक्षुक को सादर नमस्कार करता और झोली में चावल-दूध का डिब्बा डालता। मुझे इससे बहुत खुशी हुई। मैंने भिक्षुकों की झोली में अंडे-मांस-मछली भी देखीं। ये लोग बौद्ध होते हुए भी इनका खाना बुरा नहीं मानते। इससे उनकी धार्मिक निष्ठा में कोई अन्तर नहीं आता।

भिक्षा दान: प्रणयदान

भिक्षा दान का एक और पहलू है प्रणयदान। भिक्षा पात्र में जब स्यामी युवतियां सिर झुका कर आदर भाव से भीख डालती हैं तो लगता है धर्म ने कोमल साकार रूप धारण कर लिया हो। कभी-कभी इस आदान-प्रदान की प्रक्रिया में हृदय का विनिमय भी हो जाता है। ऐसी भावपूर्ण स्थिति में दोनों की आंखें झुकी नहीं रहतीं, अनजाने में आंखें मिल जाती हैं। प्रणयानुभूति होने पर भिक्षुक पीले वस्त्र उतार देता है और अपने नए साथी के साथ विवाह कर लेता है। कभी-कभी भिक्षुक भिक्षा लेते समय जीवन

साथी की तलाश में भी रहते हैं, इसे समाज में बुरा नहीं माना जाता। परन्तु, अगर कोई भिक्षुक व्यभिचार करे या पाप करे तो उसे दंडित ही नहीं, कभी कभी गोली भी मार दी जाती है। वास्तव में भिक्षुक होना एक मानसिक संस्कार है, बन्धन नहीं। आप जब कभी चाहें भिक्षुक बन सकते हैं, जब चाहें पीले वस्त्र उतार कर विवाह करलें। जो व्यक्ति एक बार भी भिक्षुक नहीं बना, उसमें आत्मग्लानि एवं आत्महीनता का भाव रहता है। इसलिए भीख मांगना धर्म के लिए तप-त्याग को बल देना है।

बौद्ध विहार

थाई की समस्त सांस्कृतिक गतिविधियों के केन्द्र हैं बौद्ध विहार। जैसे हमारे यहां स्कूल-पाठशाला बनाना शुभ माना जाता है, उसी प्रकार थाईलैंड में बौद्ध विहार बनाना मंगलकारी समझा जाता है। प्रत्येक विहार केवल उपासना उपदेश के लिए ही नहीं होते, वे कला, साहित्य, संगीत और शिक्षा के केन्द्र हैं। जब तक सरकार ने शिक्षा का प्रबन्ध अपने हाथ में नहीं लिया था, मंदिरों में ही शिक्षा प्रदान की जाती थी। अब बौद्ध भिक्षुओं की शिक्षा-दीक्षा के लिए एक विश्वविद्यालय की स्थापना कर दी गई है। यहां बौद्ध दर्शन, पाली, संस्कृत के अतिरिक्त अंग्रेजी भी पढ़ाई जाती है। विद्यार्थियों से कोई फीस नहीं ली जाती,

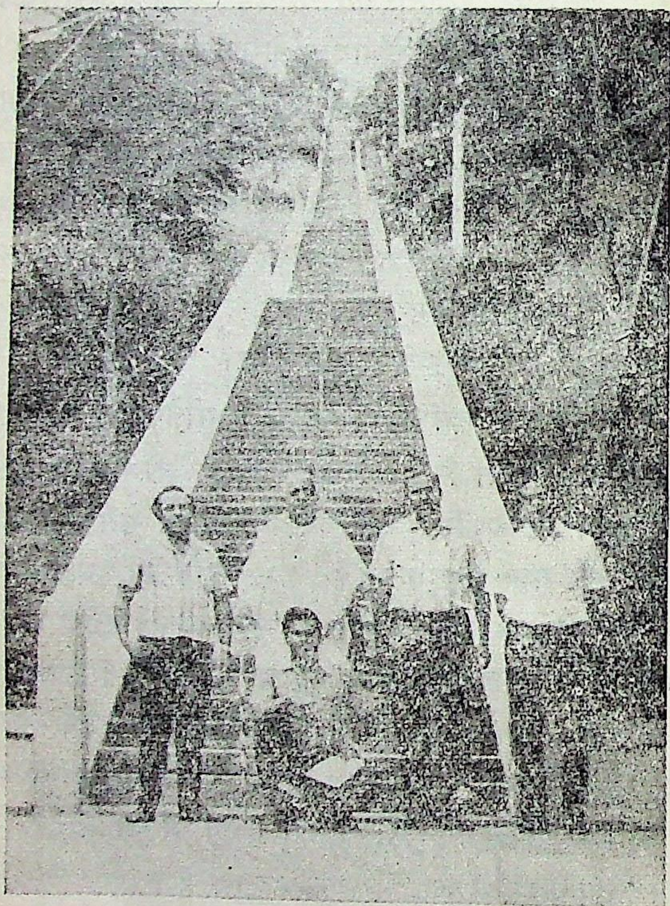
भोजन-आवास का प्रबन्ध बड़े-बड़े मन्दिरों में बोर्डिंग के रूप में हो जाता है। निर्धन छात्रों की विशेष सहायता की जाती है। यहां से उच्च शिक्षा ग्रहण कर भिक्षुओं को विद्या दान करना पड़ता है। महिलाएं भिक्षु नहीं बन सकतीं, हां, बुढापे में मंदिरों में कथा सुनने, सेवा करने जा सकती हैं। वह भिक्षा नहीं लेतीं। इस प्रकार यह क्रम चलता रहता है।

बैंकाक के बौद्ध मंदिर

बैंकाक में ४०० बौद्ध विहार हैं परन्तु इन में कुछ एक 'वाट'-मंदिर तो बहुत प्रसिद्ध हैं। 'अरुन वाट' चौपइया नदी के तट पर है। यह मंदिर अपनी नक्काशी, ऊंचाई और ऐतिहासिक गौरव के कारण प्रसिद्ध है। इस में दो युग की कलाओं का समन्वय हुआ है। यहां से बैंकाक का मनोहारी दृश्य दिखाई देता है। हरित बुद्ध मंदिर का महत्त्व राजसी वैभव के कारण है। यह राजमहल का अंग है, इसलिए साधारण भक्तों के लिए इसके द्वार रविवार को ही खुलते हैं। इस दिन हज़ारों की संख्या में श्रद्धालु लोग दर्शन और पूजा के लिए आते हैं। इस मंदिर के प्रवेशद्वार के साथ गैलरी है। यह गैलरी तो क्या, वास्तव में, एक चित्रशाला है। सारी रामायण की कथा कूची के

सहारे दीवारों पर जीवन्त कर दी गई है। कुछ एक चित्र अपनी कलात्मकता और सजीवता के कारण हृदयस्पर्शी हैं। चित्रशिला के बाद प्रधान देवालय है। पहले दो नमूने के मंदिर हैं परन्तु असली मंदिर तीसरा है। सामने जड़ाऊ सिंहासन पर भगवान बुद्ध की एक फुट ऊंची नीलम की प्रतिमा सुशोभित हैं। इन देशों में कुछ परम्परा सी बन गई है कि जब भक्त मंदिर जाता है तो मूर्ति या अन्य पवित्र स्थानों पर सोने के पत्र चिपका देता है। परिणाम स्वरूप मंदिर की दीवारों का कण कण सोने और कांच के काम से जड़ा हुआ है। आश्चर्य है कि जो गौतम वैभव ऐश्वर्य से बचने के लिए बुद्ध बना था, आज उसकी स्मृति में सोने के पत्र चढ़ाए जाते हैं। 'वाट फो मंदिर' में महात्मा बुद्ध की शयन मुद्रा में मूर्ति बनाई गई है। यह मूर्ति ५१ गज़ लम्बी और १२ गज ऊंची है। इस मूर्ति का निर्माण लगभग सौ वर्ष पहले साढ़े बारह लाख रुपया लगा कर किया गया। तथागत का इतना विराट् एवं भव्य रूप अन्यत्र देखने को नहीं मिला। इन प्रमुख मंदिरों के अतिरिक्त बैंकाक में कई अन्य मंदिर भी हैं।

बैंकाक में कई दर्शनीय स्थान है जिनमें 'रोज़-गार्डन' उल्लेखनीय है।



थाईलैंड के एक प्रसिद्ध नगर पकनमपोह के प्राचीन बौद्ध मंदिर की सीढ़ियों पर श्री नन्दलाल वानप्रस्थी के साथ मंदिर के अधिकारी

हिन्दू श्रौर बौद्ध धर्मों का समन्वय

थाईलैंड में हिन्दू और बौद्ध धर्मों का विचित्र समन्वय मिला है। विपरीत संस्कृतियों का समन्वय इस प्रदेश की उदारता का परिचायक है। थाईलैंड के राजगुरू बनारस पंडित श्री वामदेव मुनि हैं जो यज्ञोपवीत पहनते हैं, और बनारस की परम्पराओं का पालन करते हैं। इसी लिए बैंकाक के प्रसिद्ध बौद्ध मंदिर में (नीलम मूर्ति वाला) सम्पूर्ण राम कथा दीवारों पर चित्रित है। एक बौद्ध मंदिर में शिवलिंग के दर्शन हुए हैं। बैंकाक में एक ही हिन्दू मंदिर है जिसमें गणेश, विष्णु आदि की मूर्तियों के साथ बुद्ध की मूर्ति भी है। इस मंदिर का पुजारी श्रपने श्रापको ब्राह्मण कहता है, शिखा और यज्ञोपवीत रखता है, धोती पहनता है। यहां के राष्ट्रीय संग्रहालय में बुद्धदेव के श्रतिरिक्त विष्णु, गणेश, राम, हनुमान, इन्द्र, गरुड़ श्रादि कई भारतीय देवताश्रों की मूर्तियां हैं।

भारतीय नाम श्रौर भाषा में समानता

थाईलैंड के कई नगरों के नाम भारत जैसे हैं—श्रयोध्या लोपपुरी (लवपुरी) विष्णुलोक, धोनपुरी श्रादि। थाईलैंड की भाषा में हज़ारों शब्द संस्कृत, पाली श्रौर श्रपभ्रंश के हैं। इनके उच्चारण में श्रवश्य श्रंतर है परन्तु वर्णमाला में पर्याप्त साम्य है। स्यामी श्रौर हिन्दी के बहुत से शब्द मिलते

जुलते हैं, जैसे—स्थान (हिन्दी) सथान (स्यामी), नमस्कार (हिन्दी) नमस्कान (स्यामी), चन्द्र (हिन्दी) चन (स्यामी), वायु (हिन्दी) फायु (स्यामी), अंगुली (हिन्दी) अंखुली (स्यामी) राजा (हिन्दी) राछा (स्यामी), साईकिल को चक्र यंत्र तथा मोटर कार को रथ यंत्र कहते हैं। यह सूची बहुत लम्बी है। इस दिशा में शोध किया जाए तो भाषागत समानताओं के कई रहस्य उद्घाटित होंगे।

पश्चिमी प्रभाव

बैंकाक की नाइट-क्लबें अपने मादक एवं मोहक वातावरण के कारण प्रसिद्ध हैं। यह पाश्चात्य प्रभाव है जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में उभर रहा है। शहरी जीवन पर अमेरिकनों का प्रभाव–द्वितीय महायुद्ध के बाद, बढ़ रहा है। यह प्रवृत्ति नई पीढ़ी में अधिक उभर रही है।

व्यावहारिक जीवन दर्शन

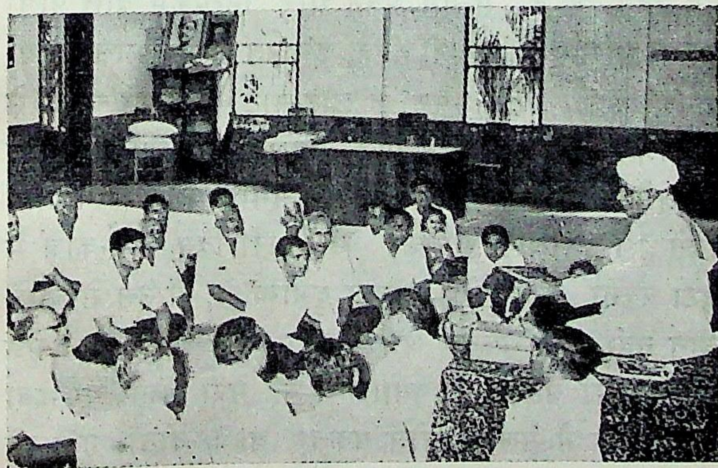
स्यामियों के रहन-सहन, सामाजिक मर्यादा, तथा नैतिक मान्यताओं पर सामूहिक दृष्टि डालने पर एक बात बार बार मेरे मन में कौंधती रही, वह था इनका जीवन दर्शन। बौद्ध धर्म पर इन्हें गहरी आस्था है, बौद्ध धर्म का आधार है वैराग्य एवं त्याग। ये लोग जीवन में एक बार श्रद्धा से भिक्षु भी बनते हैं परन्तु जहां जीवन को भोगने का संबंध

५

एशिया का गौरव: सिंगापुर

थाइलैंड में १५ दिन प्रचार करने के बाद मैं १० अगस्त १९७० को सिंगापुर पहुंचा। हवाई अड्डे पर कई प्रतिष्ठित कार्यकर्ता आए हुए थे। आर्य समाज के प्रधान श्री दुर्गादास सचदेव और डी. पी. कुमरा भारत गए हुए थे, फिर भी आठ-दस सज्जन हवाई अड्डे पर स्वागत के लिए पहुंचे। मैंने उनके उत्साह और निष्ठा के प्रति हृदय से आभार प्रकट किया।

आलीशान आर्य समाज मंदिर



आर्य समाज सिंगापुर के विशाल भवन में प्रवचन देते हुए श्री वानप्रस्थी जी।

हवाई अड्डे से मुझे आर्य समाज भवन ले जाया गया। यहीं मेरे ठहरने का प्रबन्ध किया गया था। वास्तव में यह आर्य भवन इतना सुन्दर व प्रभावशाली है कि कुछ क्षण मुझे ऐसा लगा मानो किसी अच्छे होटल में ठहर रहा हू। मैंने देश-विदेश में कई आर्य समाज मंदिर देखे हैं, परन्तु इतना साफ सुथरा और बड़ा मंदिर कहीं नहीं देखा। यह ईमारत तीन मंज़िला है। इस में एक पुस्तकालय हैं, सत्संग हाल और यज्ञशाला तीसरी मंज़िल पर हैं। सारा वातावरण इतना पवित्र एवं शान्तिपूर्ण है कि मन तत्काल अभिभूत हो जाता है। समाज की देख-भाल और सफाई के लिए एक सेविका रखी हुई है जो मलाई (मुसलमान) महिला है। वह हवन कुंड, सत्संग भवन और नित्यकर्म वाले पात्रों को तो साफ-सुथरा रखती ही है, इमारत की देखभाल, चाय-पानी, कपड़े आदि ऊपर के छोटे-मोटे कामों को चुस्ती से सम्हालती है। इस भवन में रिहायश के बढ़िया कमरे भी हैं, अतिथि यहीं ठहराए जाते हैं। समाज के मंत्री भी यहीं रहते हैं। इसलिए सेविका को सारा दिन काम-काज में जुटा रहना पड़ता है। परन्तु दुर्भाग्य से, मैं उस से बात-चीत नहीं कर सकता था और न वह अपनी बात मुझे कुछ समझा सकती थी क्योंकि न वह मेरी भाषा समझती थी और न मैं मलाई बोल सकता था। दोनों गूंगे की तरह इशारों से काम निकालते थे।

सिंगापुर में मेरे भाषण लक्ष्मीनारायण मंदिर, गीता भवन, सिंधी-कॉलोनी में कराये गये। मेरा पहला भाषण आर्य समाज मंदिर में रविवार, १६ अगस्त १९७० को हुआ। बहुत हाज़री थी। इसके बाद कई दिन लगातार रात के ८ से ९ बजे तक वहां प्रवचन होते रहे। २३ अगस्त को जन्माष्टमी का त्यौहार था। इस उत्सव पर समाज का विशाल सत्संग हाल स्त्री-पुरुषों से खचाखच भरा हुआ था। कई लोगों ने मेरे व्याख्यानों को टेप रिकार्ड किया ताकि बाद में लाभ उठा सकें। इन व्याख्यानों की सूचना स्थानीय समाचार पत्रों में भी छपी।

यहां आर्य समाज में एक रिवाज है। हर सप्ताह सत्संग के बाद किसी न किसी आर्य पुरुष की ओर से प्रीति भोजन का निमन्त्रण होता है। उस दिन कोई आर्य परिवार घर में खाना नहीं बनाता। इससे पारस्परिक स्नेह-सौहार्द, मेल-जोल, अपनापन, भाईचारा बढ़ता है। २३ अगस्त को भोजन की व्यवस्था श्री दुर्गादास सचदेव, मालिक, मूलामल एन्ड सन्स, प्रधान, आर्य समाज की ओर से थी। इस तरह जन्माष्टमी का उत्सव धूमधाम से मनाया गया।

सिंगापुर में पंडित पूर्णचन्द शर्मा के स्नेह-सहयोग को मैं कभी नहीं भुला सकता। उन्होंने प्रचार कार्य में सदा

तत्परता से मेरी सहायता की । वास्तव में उनका परिवार ही वैदिक परम्पराओं का प्रतीक है। मैं उनके यहां ठहरा भी था । उनके बच्चों के व्यवहार तथा सेवा भावना से मैं बहुत प्रभावित हुआ ।

संसार का अद्वितीय नगर-देश

असल में मैंने जब सारे सिंगापुर पर नज़र दौड़ाई तो इनकी शासन-व्यवस्था, प्राकृतिक सुन्दरता, व्यापारिक स्थिति, सफाई इत्यादि को देख आश्चर्य चकित रह गया । इस २८ मील के घेरे के नगर-देश में कौन सो चीज़ मनमोहक नहीं है ? यहां का मौसम बहुत सुहवना रहता है, न अधिक गर्मी, न अधिक सर्दी। यह एक ऐसा देश है जिस में न कोई प्रांत है, न ज़िला, न तहसील या गांव । कहीं कोई खेती-बाड़ी नहीं होती। एक भूखण्ड पर स्थित यह नगर-देश चारों तरफ समुद्र से घिरा हुआ है। यही उसकी सीमा है जिसमें वह बंधा है परन्तु यही उसकी सुन्दरता एवं आकर्षण शक्ति का मूल है । विस्तृत सरोवर में खिले हुए कमल सा सिंगापुर दूर से ही प्रकाश स्तम्भ सा दिखाई देता है ।

माउंट फीबर का सौन्दर्य

सिंगापुर के सौन्दर्य एवं आकर्षण का केन्द्र है माउंट फीबर । असल में शहर के बीच में एक पहाड़ी है जिसको सरकार ने साज-संवार कर सुन्दर बनाया है । यह एक

ऐसा स्थल है जहां से शहर के चारों ओर की साफ सड़कों, चमकती इमारतों और यातायात की गाड़ियों के न समाप्त होने वाले दृश्य को देखा जा सकता है। दूर समुद्र की अनन्त और अथाह जल राशि, उमड़ती लहरों का उठना गिरना और इनमें उभरते छिपते समुद्री जहाजों का तांता, यह सारा ऐसा सिलसिला है जिससे न कभी मन भरता है और न यह खत्म होता है। इसीलिए बाहर से आने वाले सैलानी यहां घंटों बैठे रहते हैं। यहां एक छोटा सा होटल भी है जिसमें जलपान का पूरा प्रबन्ध हैं।

ऐतिहासिक महत्त्व

माउंट फीबर का छोटा सा इतिहास है। इस बाग को एक चीनी फर्म ने करोड़ों रु० खर्च करके बनवाया। जैसे अपने देश में अमृतधारा का नाम प्रसिद्ध रहा, वैसे ही यहां टाइगर बाम (मल्हम) का प्रचार है। यह आस-पास के देशों में खूब खपता है। इस फर्म ने बाग को ऐतिहासिक महत्त्व का स्थान बना दिया है। उन्होंने बाग में पत्थरों की बड़ी-बड़ी मूर्तियां बनवाई,कुछ पशु-पक्षियों एवं जानवारों की, और शेष महात्मा बुद्ध की। बुद्ध के चित्रों में विविधता और नवीनता है। चीनी जीवन और इतिहास को तो यहां मूर्तियों द्वारा सजीव कर दिया गया है। उनके रहन-सहन, खान-पीन, विवाह-मरण की परम्पराओं को

चित्रवत् कर दिया गया है। दर्शक की आंखों के सामने चीनी जीवन उभर आता है। एक स्थान पर चीनी अदालतें दिखाई गई हैं। किस-किस अपराध का क्या दंड मिलना चाहिये, सब कुछ दिखाया गया है। झूठ बोलने और कुकर्म करने वाले की कहीं जीभ काटी जा रही है, कहीं अग्नि में डाला जा रहा है, कहीं आरे से चीरा जा रहा है, कहीं गाड़ी के नीचे कुचला जा रहा है कहीं हाथ काटे जा रहे हैं, कहीं समुद्र में फेंका जा रहा है, कहीं रस्सों से बांध कर पत्थर मारे जा रहे हैं। हमारे यहां पुराणों में नरक के जो भयावह चित्र दिखाए गए हैं, वे सब चीनी इतिहास में मूर्तिमान् किए गए हैं।

सिंगापुर के मिले-जुले लोग

पहली नज़र पर लगता है कि सिंगापुर में केवल चीनी ही हैं, परन्तु धीरे-धीरे महसूस होता है कि इस शहर की जनसंख्या में ८० प्रतिशत लोग अवश्य चीनी हैं, शेष मलाई और भारतीय हैं। कुछ यूरुप और जापान के लोग हैं पर कम। इस प्रकार २० लाख की आबादी का यह शहर अलग- अलग जातियों, भाषाओं और संस्कृतियों का मिला-जुला देश है। इस विविधता में आकर्षण है, सब लोग अपने अपने रीति रिवाज और रहन सहन में रहते हुए भी धीरे-धीरे एक दूसरे से सीख रहे हैं और एक दूसरे

के पास आ रहे हैं। समान भावना को ध्यान में रख कर ही यहां तमिल, मलय, चीनी और अंग्रेजी को सरकारी भाषाएं माना गया है। आज कल पश्चिमी प्रभाव के कारण अंग्रेजी का प्रयोग अपेक्षाकृत बढ़ रहा हैं।

यहां भारतीय अधिक नहीं हैं, लगभग १० प्रतिशत के करीब हैं। इनमें से ८० प्रतिशत मद्रासी, करीब १० प्रतिशत गोरखपुर-आज़मगढ़ के, शेष १० प्रतिशत पंजाबी हिन्दू, सिख हैं।

उन्नति के शिखर पर

सिंगापुर संसार की चौथी बड़ी बंदरगाह है। यहां आने-जाने वाले जहाज़ों का सदा तांता लगा रहता है, यही हाल हवाई अड्डे का है। हर पांच-सात मिनट पर कोई न कोई हवाई जहाज़ उड़ता-उतरता है। नए अमेरिकी ७४७ हवाई जहाज़ के लिए यहां विशेष प्लेट फार्म तथा दूसरे प्रबन्ध किए जा रहे हैं। विचित्र बात है कि यहां मोटर कारें बहुत सस्ती हैं। प्रति छटे व्यक्ति के पास एक कार है। कारों, बसों, स्कूटरों, मोटर-साइकिलों के ठहरने की जगह निश्चित है। नम्बर पर कार खड़ी की की जाती है और एक घंटा गाड़ी खड़ी करने के यहां के ४० पैसे और भारत का एक रुपया लगता है। इधर. दूसरे देशों की तरह यहां की आबादी भी बढ़ रही है पर

इधर-उधर फैलाव का कोई स्थान नहीं है। चारों तरफ समुद्र है। दूसरे देश तो नई बस्तियां आबाद कर लेते हैं, इनके लिए केवल एक ही मार्ग खुला है और वह है आकाश का। सरकार पुराने मकानों को गिराकर ऊंची-ऊंची इमारतें बना रही है। ३५ मंजि़ला मकान तो बन चुके हैं, अब ५० मंजि़ली इमारतें बनाने का निर्णय किया गया है।

उन्मुक्त बन्दरगाह (फ्री पोर्ट)

सिंगापुर में कोई वस्तु पैदा नहीं होती, परन्तु यहां पर सब देशों की सभी आवश्यक चीजे आसानी से मिल जाती हैं। ताज़ा सब्जि़यां, फल, ताज़ा-दूध, मक्खन, घी आदि सारा सामान आस-पास के देशों से हर रोज़ आता है; आस्ट्रेलिया-चीन-जापान सभी देश भेजने में तत्पर हैं। जैसा कि सबको पता है, सिंगापुर 'फ्री-पोर्ट' उन्मुक्त बन्दरगाह है, इसलिए अन्तर-राष्ट्रीय मार्केट है। सभी बड़े देशों की अच्छी-अच्छी चीजें यहां मिलती हैं और सस्ती मिलती हैं। कई बार तो आश्चर्य होता है कि यहां के लोग कितने भाग्य शाली हैं, उद्योग-धंधों के झगड़ों में पड़े बिना यहां की जनता को सारा सामान सुविधा से मिलता है, सस्ता मिलता है और अच्छा मिलता है।

आदर्श प्रशासन व्यवस्था

इस प्रगति का एक रहस्य है, वह है यहां की प्रशासन

व्यवस्था में कर्त्तव्य निष्ठा, ईमानदारी तथा भ्रष्टाचार का अभाव। मैं कई तरह के लोगो से मिला। कई तरह के सवाल पूछे इस छोटे से देश के बारे में। किसी ने रिश्वत की कोई शिकायत नहीं की। किसी महकमें में चले जाइए, विशेषत:, वे महकमे जो जनता से सीधे सम्बद्ध है, वहां भी भ्रष्टाचार का नाम तक सुनने को नहीं मिला। प्रत्येक मामले में पूरा पूरा न्याय होता है। यहां के मंत्री भी सिफारिश के लिए बदनाम नहीं है। पिछले दिनों यहां एक घटना सुनने को मिली। प्रधान मंत्री श्री ली का एक संबंधी किसी ऊंचे ओहदे पर था। उसके बारे कुछ हेरा-फेरी का पता चला। रातों रात बिस्तर गोल कर दिया गया। यहां की स्थिति इतनी सुधरी हुई है कि भ्रष्टाचारी की ज़मानत देते समय सभी साथी कतराते-घबराते हैं। इस प्रकार रिश्वत और सिफारिश दोनों से यह देश बचा हुआ है।

न्याय-पालन में सतर्कता से न्याय के प्रति निष्ठा बढ़ती है। ऐसे ही एक और घटना का पता चला। एक आदमी का कत्ल कर दिया गया। अपराधी को मृत्यु दण्ड तो मिला ही, साथ ही, उसके सात साथियों को भी मृत्यु दण्ड दिया गया। संसार में ऐसे उदाहरण कम ही मिलेंगे जहां एक वध के लिए सात अपराधियों को मौत की सज़ा दी गयी हो। छोटी-छोटी बातों का भी पूरा ध्यान रखा जाता है

जिसका प्रमाण है सिंगापुर की सुव्यवस्था। सारे सिंगापुर का चक्कर लगा आइये, आपको सफाई और देख-भाल देख कर बहुत खुशी होगी। मज़ाल है आपको सड़क पर कहीं बीड़ी-सिग्रेट के टुकड़े, पान की थूक या दूसरा कचरा मिले। कहीं आपको बच्चा-बूढ़ा गली या बाज़ार के नुक्कड़ या नाली पर पेशाब करते नहीं मिलेगा। कहीं किसी ने इन नियमों का उल्लंघन किया, वहीं वह पकड़ा जाएगा। उसे १० से ५० डालर तक जुर्माना देना पड़ेगा। मुझे तो यही देखने-सुनने में मिला कि छोटे या बड़े किसी मामले में पक्ष-पात नहीं होता, नियम और न्याय का ईमानदारी से पालन होता है। इन सब बातों का श्रेय प्रधान मंत्री श्री ली को मिलना चाहिए। अब तो यह न्याय-निष्ठा यहां के लोगों की आदत बन गई है, वे अपने आप ईमानदारी से कर्त्तव्य पालन करते हैं। यह जागृति किसी भी जाति और देश की महान पूंजी है। ऐसी जागृति ही स्वतंत्रता की नींव है। इसलिए इस देश ने पिछले २०० सालों में इतनी उन्नति नहीं की जितनी आज़ादी के बाद कुछ सालों में की है। यहां की गौरवमयी परम्पराओं को देख कर अपने देश वासियों, नहीं नहीं, अपने ऊपर लज्जा आती है। मैं भी तो इसी भारत देश का हूँ !

प्रबुद्ध देश

सच है, सिंगापुर एक जागृत देश है; यहां की जनता

प्रबुद्ध है, क्योंकि जनता का प्रतिरूप ही तो किसी देश की सरकार होती है। राजनैतिक दृष्टि से भी ये लोग सतर्क हैं। यहां लोक तंत्र है, एक ही विरोधी दल है - बी. एस पार्टी। सन् १९५९ में यहां अपनी सरकार बनी, सन् १९६३ में यह मलाया देश के साथ मिल गया। मलेशिया के साथ ठीक सिलसिला बैठा नहीं और सन् १९६५ से यह देश अलग और पूर्ण स्वतंत्र हो गया है।

भारतीय दूतावास की लापरवाही

इन देशों में मैंने भारतीय दूतावासों की गतिविधियों को समझने-जानने की कोशिश की। मुझे लगा कि दूतावास के लोग इतने चतुर, व्यवहार कुशल तथा नीतिज्ञ नहीं है जितने दूसरे देशों के मुझे प्रतीत हुए। १६ अगस्त को यहां सात देशों की दौड़ों-खेलों का मुकबला था। जापान, चीन, आस्ट्रेलिया, बर्मा, थाईलैंड, भारत जैसे सब एशियाई देशों के झंडे लहरा रहे थे। पाकिस्तान को आमंत्रित तो किया गया था परन्तु उसकी टीम नहीं आई थी। सब देशों के राजदूत बैठे थे। पाकिस्तान का राजदूत, टीम न आने के बावजूद, बैठा था, परन्तु भारत का उच्चायुक्त अपनी टीम के होते हुए भी वहां उनके स्वागत, उत्साह वर्धन तथा आत्मविश्वास के लिए नहीं आया। भारत के खिलाड़ियों

ने अपना नाम कमाया परन्तु उनको बल देने के लिए कोई न था।

मैं वहीं था, सब कुछ देख-सुन रहा था। मुझे बहुत खेद हुआ कि अधिकारी क्यों इतने कुशल एवं सतर्क नहीं हैं। इन बातों का दूसरों पर कम असर नहीं पड़ता।

एक रोचक अनुभव

इसी बीच एक मनोरजंक घटना से मुझे नया अनुभव हुआ। इस अवसर पर अधिकारियों और अतिथियों के लिए सीटें निश्चित थीं। श्री के० डी० गुप्ता ने एक सीट मेरे लिए भी रखवा दी थी। मेरे पास ही टेलिविज़न वाले कैमरा चला रहा थे। मेरे पास एक सिख सज्जन भी बैठे हुए थे। सारे स्टेडियम में मेरे या मेरे साथी के सिर पर पगड़ी थी, शेष सब नंगे सिर थे। टेलिविज़न वालों ने हम दोनों के फोटो लिए। मैंने इस ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। दूसरे दिन सुबह सत्संग में कई लोगों ने मुझ से पूछा—खेलें कैसी रही? मैंने सोचा, ये लोग भी वहीं होंगे, मुझे आते-जाते देखा होगा, इसलिए पूछ रहे हैं। परन्तु बाद में पता चला कि रात को जब समाचार प्रसारित किए जा रहे थे तो पगड़ियां बांधे हमारे चित्र बार-बार दिखाए गए। दूसरे शब्दों में, मेरा चित्र पगड़ी बांधने के कारण लिया गया। नया ज़माना आ रहा है, पगड़ियां

अब पहनने के लिए नहीं, केवल पुरानी परम्परा के बचे चिन्ह का प्रतीक रह गई हैं।

सामाजिक अधिक धार्मिक कम

जैसा कि थाईलैंड में मेरा अनुभव रहा, यहां धर्म प्रचार के लिए लोगों में निष्ठा एवं सद्भावना है परन्तु उसका महत्त्व सामाजिक अधिक और धार्मिक कम है। वे धर्म की बात अवश्य सुनना चाहते हैं ताकि भारतीय संस्कृति से जुड़े रहे।

यह मेरा सौभाग्य ही है कि जिस आर्य समाज में स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज, स्वामी ध्रुवानन्द, मेहता जैमिनी, महात्मा आनन्द स्वामी, पंडित प्रकाशवीर शास्त्री जैसे विशिष्ट संन्यासी एव महानुभाव प्रचारार्थ आ चुके हैं उसी मंच से मुझे वैदिक धर्म के प्रचार का अवसर मिला। मेरा विचार यहां १० सितम्बर तक ठहरने का है। इसके बाद मलेशिया की राजधानी कोलालम्पुर और पेनांग जाऊंगा।

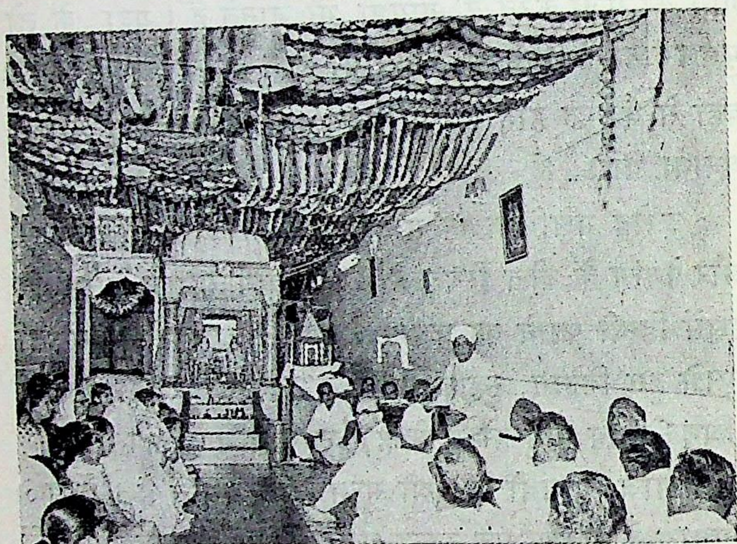
इस्लामी परंपराओं में बंधाः मलेशिया

थाइलैण्ड और सिंगापुर की यात्रा के बाद मैं मलेशिया पहुंचा। सबसे पहले मैं मलेशिया के प्रसिद्ध नगर इपोह में लगातार १० दिन वैदिक धर्म का प्रचार करता रहा। २१ सितम्बर को मैं मलेशिया की राजधानी कोलालम्पुर पहुंचा। सिंगापुर में एक मास प्रचार कर चुका था, परन्तु उन लोगों के आग्रह से एक सप्ताह का एक और कार्यक्रम बना लिया गया। इसके बाद, प्रभु की कृपा रही, तो मेरा इंडोनेशिया की राजधानी जकार्ता और फिर बाली टापू जाने का विचार था। बाली में जाने का वैसे ही आकर्षण हो रहा था। वहां पर कई हजार हिन्दू आबाद हैं।

शासन की तरफ से इन हिंदुओं फुसलाकर मुसलमान बनाने की कोशिश सफल न हो सकी। यहां इसाई मिशनरी भी कई दांव लगा चुके हैं फिर भी ये हिन्दू अपने धर्म और संस्कृति के प्रति अडिग एवं अटल हैं। वहां पर कपूरथला के पं० नरेन्द्र जी रहते हैं जिनकी शादी यहां की एक कन्या से ही हुई है। ये लोग रामायण का पाठ करते हैं, कथा सुनते हैं,

गाय की पूजा करते हैं, गायत्री भी जानते हैं। यहां के तो मुसलमानों के नाम भी हिन्दुओं जैसे हैं—सीता, पद्मा। वहां से बैंकाक होते हुए हांगकांग और टोकियो का प्रोग्राम बनाया था।

इपोह मलेशिया का सुन्दर नगर है। यह कोलालम्पुर और पेनांग के बीच स्थित है। यहां आर्य समाज मंदिर है, इसमें हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध है। यहाँ के नामी कार्यकर्ता सुलझे हुए विद्वान्, स्वाध्याय-शील धनी पं० रघुनाथ शर्मा (जिनकी अब मृत्यु हो चुकी है) रघुनाथ एण्ड कंपनी वाले, इस समाज के मंत्री थे। श्री मुन्शी राम प्रधान हैं। मैं पं० रघुनाथ के मकान पर ठहरा था। भोजन तो कभी किन्हीं सज्जन के यहां और कभी किन्हीं के घर परन्तु संध्या-हवन आदि नित्य-कर्म इनके परिवार के साथ ही करता था। इनके बच्चों में इतनी सेवा सत्कार भावना है कि मैं आजीवन नहीं भूल सकता। मेरी तो बात ही क्या, इनके यहां जो भी संन्यासी महात्मा ठहरा, सभी के साथ ये लोग ऐसा बरताव करते हैं। महात्मा आनन्द स्वामी जी भी यहीं ठहरे थे। ऐसे बाल-बच्चों वाले गृहस्थी को बार बार आशीर्वाद देने को मन करता है। असल में यहां गुरदास पुर के २०-२५ परिवार बसे हुए हैं जो अच्छे सम्पन्न हैं और आर्य समाज में विशेष रुचि लेते हैं।



श्री नन्द लाल वानप्रस्थी—
मलेशिया की राजधानी कोलालम्पुर के लक्ष्मी नारायण मंदिर में प्रवचन देते हुए ।

कोलालम्पुर में हिन्दुओं के ३-४ सनातन धर्म मन्दिर हैं परन्तु कोई आर्य समाज नहीं है। यह अभाव बहुत चुभता है। गुरुद्वारे भी हैं। यहां मेरे भाषण लक्ष्मी नारायण मन्दिर में हुए। अच्छी हाज़री रही। मेरे भाषण सितम्बर १९७० तक हुए। यहां भी लोगों में मैंने बाहर से आए साधु-संन्यासियों के विचार सुनने के लिए निष्ठा एवं तत्परता देखी। ये लोग मेरे व्याख्यानों के भी टेप रखते थे। यहां मैंने कुछ दिन प्रचार कार्य किया।

यहां धर्म का स्वस्थ रूप

इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत वर्ष धर्म प्रधान देश है। जगह जगह मंदिर गुरुद्वारे, मस्जिदें और गिरजाघर हैं। सुबह ३ बजे से ही अखंड पाठ, कीर्तन या बांग लगनी शुरू हो जाती है परन्तु इन से लोगों के आचरण में ईमानदारी, कर्त्तव्यनिष्ठा जैसे गुण नहीं आए जो सभी धर्मों का लक्ष्य है। पिछले २२ सालों से हम अपने देश में भ्रष्टाचार का नंगा नाच देख रहे हैं। मानवता दमतोड़ रही है, लगता है हम इन्सान नहीं, पशु होते जा रहे हैं। मेरी इस विदेश यात्रा के इन देशों में भले ही सुबह ३ बजे अल्लाह या ईश्वर का नाम पुकारने वाला कोई नहीं मिलेगा, उस समय ये लोग आराम की मीठी नींद में निमग्न होते हैं पर इनमें मानवता के प्रति निष्ठा है। नित्य प्रति के काम काज, सुख-दुःख तथा लेन-देन में इंसानियत का परिचय देते हैं। यह गुण हमने इनसे सीखने हैं। हम लोग धर्म के कर्मकांड को ही सब कुछ समझ बैठतेहैं, वास्तव में, धर्म का सीधा और गहरा सम्बन्ध तो सदाचार से है।

आज़ाद हिंद फौज की यादें

एक चीज़ ने मेरे मन पर गहरा असर डाला—आज भी यहां के लोगों की ज़बान से आज़ाद हिन्द फौज के नेताओं

के त्याग, वीरता, साहस और गौरव की कहानियां सुनने को मिलती हैं। कई बार तो उन स्थानों और प्रसंगों को देखने-सुनने पर आंखो में आंसू आ जाते हैं। असल में आजाद हिन्द फौज का सारा संगठन और तैयारी यहीं हुई थी और नेताओं की असाधारण आत्मिक शक्ति और साहस को देख कर यहां के लोग आश्चर्य चकित हो रहे थे। अब भी यहां के लोगों को नेताजी और उनके अधिकारियों की सभी घटनाएं याद हैं। नेताजी अमुक स्थान पर ठहरे थे, कहां-कहां भाषण दिये थे, रासबिहारी बोस, भोंसले, जनरल मोहन सिंह, शाहनवाज, सहगल, ढिल्लों की बीसियों बातें सुनने को मिलीं। औरतों की लक्ष्मीबाई रेजिमेंट तथा कैप्टन लक्ष्मी बाई की यादगारें कभी भुलाई नहीं जा सकतीं। मैंने छोटे बड़े उन सभी स्थानों को देखा जहां-जहां आजाद हिन्द फौज या नेताजी ने कुछ किया था क्यों कि यही तो हमारे वास्तविक तीर्थ स्थान हैं।

मलेशिया का शासन-तंत्र

मलेशिया में लोकतत्र और राजतंत्र का मिला जुला रूप है। मलेशिया में छोटे-बड़े तेरह राज्य हैं। हरएक राज्य का एक राज्यपाल तथा उसकी एक निर्वाचित राज्य सभा है। ये राज्यपाल (सुल्तान) बारी-बारी एक महामहिम राजा का चुनाव करते हैं जो पांच वर्ष तक के लिए होता है। इस

तरह प्रत्येक राज्यपाल को महामहिम राजा बनने का अवसर मिलता है। केवल मलाई जाति का व्यक्ति ही यह पद सम्हाल सकता है। केन्द्र में संसद के दो सदन हैं, हमारी राज्य सभा तथा लोक सभा की तरह। मंत्रिमंडल का चुनाव प्रधान मंत्री करता है जो 'दीवान रय्यत' में से चुना जाता है। यह मंत्रिमंडल देश की नीतियों और कार्यवाहियों पर नियंत्रण रखता है। इसका निर्वाचन भी पांच वर्ष के लिए होता है। प्रधान मंत्री का भी मलाई होना आवश्यक है।

भाषा

यहां की राष्ट्रीय भाषा मलाई है परन्तु सरकारी भाषा अंग्रेजी भी है। मलाई का प्रयोग आम जनता में खूब चलता है। आश्चर्य है, इसके ६० प्रतिशत शब्द संस्कृत से अपनाए लगते हैं। विदेशी प्रभाव के कारण अंग्रेजी का प्रयोग बढ़ रहा है।

बहुजातीय देश

मलेशिया बहुजातीय देश है। मूल निवासी मलाई कहलाते हैं, इनमें कई मुख्य उपजातियां हैं। चीनी भी कम नहीं। बाहर के लोगों में भारतीय सबसे अधिक हैं। इसका मुख्य कारण यह है कि मलाई लोगों ने व्यापार के लिए विदेशियों का स्वागत किया। विदेशियों ने यहाँ कई तरह

के उद्योग धन्धे शुरू किये, इसलिए मलेशिया में व्यापार चीनियों के या फिर भारतीयों के हांथ में है।

मलेशिया की दो मुख्य जातियों के दो धर्म हैं—इस्लाम और बौद्ध। दोनों धर्मों के उत्सवों-त्यौहारों और महत्व-पूर्ण दिवसों को मनाया जाता है। यहीं नहीं हिन्दुओं के उत्सव भी मनाए जाते हैं, ऐसा मैंने सुना है। इस तथ्य की ऐतिहासिक पुष्टि होती है यहां के पुराने मंदिरों बौद्ध विहारों, मस्जिदों आदि से। यहाँ समन्वय अवश्य है परन्तु सहनशीलता की नीति का पालन हो नहीं रहा।

धार्मिक संकीर्णता

इस तस्वीर का एक दूसरा पहलू है जिसे देख निराशा सी होती है। इस देश का विधान और सरकारी धर्म इस्लाम है। इस्लाम के प्रचार प्रसार के लिए सरकार पूरा ध्यान रखती है और प्रयत्न करती है। इसलिए सरकार ने कोलालम्पुर में डेढ करोड़ रु० की लागत से एक विशाल भव्य मुस्जिद बनाई हैं। भारत सरकार ने इसके लिए एक चांदी की कुर्सी भेंट की है। इपोह में भी एक नई मस्जिद पर लाखो रु० खर्च किया गया।

सरकारी प्रलोभन

मुसलमान बनने के लिये सरकारी तौर पर विशेष

प्रलोभन दियें जाते हैं। इसके फलस्वरूप कुछ लोग मुसलमान बने भी हैं। पंजाब के कुछ ब्राह्मण परिवारों का, जो यहां रहते थे, मुसलमान बनना भी मैंने सुना। अगर किसी मलाई लड़की का विजातीय लड़के से संबंध हो जाये तो लड़के को कानूनी तौर पर इस्लाम धर्म कबूल करना होगा। बा-कायदा उसकी सुन्नत होगी। यही नहीं, पिछले दिनों एक मंत्री ने घोषणा की थी कि जो व्यक्ति इस्लाम धर्म अपना लेगा उसको ६० डालर की सहायता तथा नागरि-कता के अधिकारों के साथ अन्य सुविधाएें दी जायेंगी। इसका प्रभाव पड़ा। कुछ ने धर्म बदला और कुछ भारतीयों को विवश होकर लौटना पड़ा। सच तो यह है कि वह ज़माना बीत गया जब लोग इस देश से रुपया इकट्ठा करके भारत ले जाते थे।

असुरक्षा एवं आशंका

अब तो दिन प्रति दिन स्थिति खराब होती जा रही है। गैर-मलाई लड़का-लड़की किसी कक्षा में फेल हो जाएं तो फिर स्कूल में नहीं पढ सकते। सब प्राइवेट स्कूल सर-कार के हाथ में है हीं। गैर-मलाई को किसी प्रकार की कोई सुविधा नहीं मिल सकती—न नौकरी में और न व्यापार धंधों में। नागरिकता पाने की शर्तें कड़ी होती जा रही हैं। मुझे यह धार्मिक असहिषुणता बहुत बुरी लगी।

विचित्र रिवाज: मरने पर खर्च

यहां के लोग शादी और जन्म दिन पर इतना खर्च नहीं करते जितना मरने पर करते हैं। कागज के मकान और बगीचे सजा कर शव के साथ ट्रकों में रख लेते हैं। शव को मसाले लगाकर और डिब्बे में बन्द कर कई कई दिन तक रख छोड़ते हैं। जब सभी रिश्तेदार बन्धु-बांधव आ जाते हैं तो खूब जशन मनाया जाता है। शराब, हर तरह का मांस, विशेष रूप से सूअर का मांस, शौक से खाया जाता है। सभी लोग कागज़ के मकान, गुलदस्ते आदि साथ लाते हैं और मुर्दे के सिरहाने रखकर जलाते हैं। इनका विश्वास है कि जितने रुपये-पैसों के नोट मुर्दे के सिरहाने रखे जाएं या जलाए जाएं या चीनी मन्दिर के पुजारियों को दिये जाएँ, उससे कहीं ज्यादा मरने वाले को स्वर्ग में मिलते हैं। सम्भवत:, इसीलिए आपको बाजार में ऐसी कई दुकानें मिल जाएंगी जहां मुर्दों को बन्द रखने के लिए हर साइज़ के डिब्बे मिल जाएंगे। कागज़ के कमरे, मकान, सोफासैट, कुर्सियां, जहाज, नोट इत्यादि यहां की यह परम्परा मुझे विचित्र प्रतीत हुई।

ये लोग भूत-प्रेतों से बहुत डरते हैं। भूत-प्रेत से बचने के लिए पटाखे आदि जलाते हैं ताकि वे भाग जाएं।

नये तरीके से परदा प्रथा

मुस्लिम संस्कृति के अनुरूप यहां परदा प्रथा है पर ज़रा नए ढंग से। नई नई इमारतें २५-३० मंजिला हैं। उनका नक्शा इस तरह का बनाया गया हैं कि प्रत्येक परिवार परदे में रह सके। किसी की नज़र न पड़े और न कुछ दिखाई दे। मैं स्वयं जहां ठहरा था, वह १२ मंजिला इमारत थी। मैं ११वीं मंज़िल पर ठहरा हुआ था। इसमें २९७ परिवार रह रहे हैं। सभी ओट और परदे में हैं। इसी तरह गाड़ियों में रात को सोने के लिए जहां व्यवस्था की गई उस 'बर्थ' पर परदे का इन्तजाम किया गया। वैसे अन्यथा, सामाजिक स्तर पर परदे का वह ज़माना नहीं रहा, बस, एक परम्परा का पालन हो रहा है।

आर्थिक समृद्धि

मलेशिया की अर्थ व्यवस्था भारत से ज्यादा भिन्न नहीं है। मुख्य रूप से निजी क्षेत्र को व्यापार-उद्योग में पर्याप्त स्वतन्त्रता है परन्तु सार्वजनिक हित में कुछ उद्योग सरकार के हाथ में हैं। जैसे रेल, डाक तार, आदि। हमारे यहां की तरह इसे मिश्रित अर्थ व्यवस्था कह सकते हैं।

देश की समृद्धि का आधार है रबड़, टिन, लकड़ी तथा लोहे का उत्पादन एवं निर्यात। रबड़ तो इसका

सर्वाधिक प्रमुख आय साधन है। वैसे, राज्यों में कृषि का विकास हो रहा है परन्तु धीरे-धीरे देश उद्योगीकरण की ओर बढ़ रहा है।

यहां के लोग पर्याप्त सम्पन्न हैं, प्रमाण, यहां की प्रति व्यक्ति आय एशिया में सबसे अधिक है। शहर में घूमकर समृद्धि का परिचय स्थान-स्थान पर मिल जाएगा। मोटर-कारों को लीजिए, । हमारे यहां जैसे साइकिल अधिक हैं, वैसे ही गहां मोटर-कारें अधिक हैं। सड़क पार करना तक मुश्किल हो जाता है। गांव तक में टेलिविज़न पहुंच चुके हैं। खाने-पोने-ओढ़ने की सब चीजें मिलती हैं और खूब मिलती हैं। सब्जियां, फल, मक्खन, दूध की तो बात ही क्या, सुख-सुविधा का दूसरा सारा सामान सिलता है। परन्तु चीज़ें इतनी सस्ती नहीं हैं। कोका-कोला ७० पैसे में, लैमन ७० पैसे में, चाय ५० पैसे में, हजामत डेढ़ रुपया।

भीख मांगना जुर्म है। धार्मिक भावना का आदर करते हुए सप्ताह में एक दिन इसकी इजाज़त दी जाती है।

उद्योग और पूंजी : चीनियों के हाथ में

जैसे पहले लिखा जा चुका है, इतना कुछ करने के बावजूद, मलेशिया का अर्थ तंत्र चीनियों के हाथ में है। व्यापार, उद्योग-धन्धों के मालिक होने का सौभाग्य चीनियों को ही है, मलाई लोगों को नहीं। चीनी लोग मेहनती हैं

ग्रौर व्यवहार कुशल भी । उनकी ग्रौरतें भी चुस्त एवं चतुर हैं । वैसे भी, सदियों से इन लोगों ने यहां बस कर, नए-नए उद्योग-धन्धों का निर्माण एवं विकास किया । मलेशिया की ग्रार्थिक उन्नति में इनका महत्वपूर्ण योगदान है । इस दृष्टि से भारतीयों का साहस भी कम प्रशंसनीय नहीं है ।

नए साफ-सुथरे शहर

मलेशिया के शहरों-कस्बों का विकास नए वैज्ञानिक एवं आधुनिक ढंग से हो रहा है—खुली चौड़ी सड़कें—नए हवादार मकान—हरियाली—सामाजिक सुविधाग्रों ग्रौर आर्थिक विकास की व्यवस्था । कोलालम्पुर इसका प्रमाण है । सारा शहर साफ-सुथरा, खुला और व्यवस्थित रूप से बना हुग्रा है । सरकार ने सभी झोंपड़ियां उठा दी हैं । वहां पर नए कई मंजिला मकान बनाये जा रहे हैं और इन लोगों को सस्ते किराए पर जगह दी जा रही है । 'पेटलिंग जया' कोलालम्पुर की ऐसी बस्ती है जो नए उभरते शहरों का प्रतीक है । इसमें कम ग्राय के लोगों के लिए सस्ते मकान हैं ग्रौर यह बस्ती सामाजिक सुविधाओं और ग्रार्थिक एवं औद्योगिक दृष्टि से भी पूर्ण है । यहां के जलवायु को ध्यान में रख कर मकान ही बनाए गए हैं । नई इमारतों के नक्शों में नई ग्रौर पुरानी वास्तुकला

का समन्वय मिला है। इमारतें नई हैं परन्तु उनकी बनावट में प्राचीन मलेशिया के वैभव-चिह्नों को लिया गया है। ये केवल पश्चिम की नकल नहीं है, कुछ अपनी अच्छाइयों को भी अपनाया गया है। वास्तव में 'पेटलिंग जया' से नए सुनियोचित विकास का सूत्रपात होता है। इसका परिचय मलेशिया के दूसरे शहरों, पेनांग, इपोह आदि में देखा जा सकता है। ये शहर भी अच्छे-सुन्दर एवं खुले हैं।

कोलालम्पुर की श्रेष्ठ शासन व्यवस्था

कोलालम्पुर में रहते हुए ऐसा लगता है जैसे यूरोप के किसी उन्नत शहर में ठहरे हों। सारे शहर की सफाई यातायात, और दूसरी चीजों का इतना अच्छा प्रबन्ध है कि देखते ही मन पर गहरा प्रभाव पड़ता है। पिछले १४ सालों में केवल दो बार बिजली बंद हुई और वह भी कुछ मिनटों के लिए। ट्रेफिक को लीजिए, इसका इंतजाम प्रशसनीय है। भीड़ के बावजूद होर्न नहीं बजाया जाता। केवल संकटकाल में इसका प्रयोग किया जाता है। टैक्सी मिलने में कोई कठिनाई नहीं होती। बस फोन कर दीजिए, घर से ले जाएगा और ठीक स्थान पर उतारेगा। मुझे भी टैक्सी वाला घर पर से ले गया था। उसके साथ और सवारियां थीं। उनको अपने अपने मकान पर उतारता गया। टैक्सी पर केवल चार सवारियां बैठ

सकती हैं। पांचवीं सवारी लेने या कोई और नियम तोड़ने पर लाइसेंस जप्त हो जाता है। टैक्सी या अन्य सवारियों के रुकने- ठहरने के लिए खास निश्चित जगह है, वहीं रोकना होगा, नहीं तो जुर्माना होता है। मोटर स्टैन्ड पार्किंग के लिए बने हुए हैं। उन पर किराया लगता है।

इसी तरह, अक्सर कोई व्यक्ति कर्ज की रकम न लौटा रहा हो तो जल्दी ही उसकी चल सम्पति की नीलामी के आदेश दिए जाते हैं। लोकल बसें भी चलती हैं, कहीं जाइये किराया वही। बस के दो दरवाजे हैं। खोलने और बंद करने का सिलसिला ड्राइवर के हाथ में है। बटन दबाने पर दरवाजा खुल जाता है। चलते वक्त दरवाजा बंद रहता है। हमारे यहां दिल्ली में बसों में तो भागा-भागी और लोग लटकते मिलते हैं। यहां ऐसी कोई गड़-बड़ नहीं हो सकती। न चलती बस पर चढ़ा जा सकता है और न उतरा जा सकता है। ड्राइवर दरवाजा खोल कर बंद करेगा, इसलिए वह सबका ध्यान रखता है।

रिक्शा में बहुत अन्तर देखा। हमारे यहां रिक्शा ड्राइवर आगे सीट पर बैठता है सिंगापुर में ऐसा नहीं है। वहां तीनों पहिए एक लाइन में होते हैं, इसलिए ड्राइवर सवारियों के साथ बैठता है। ऐसा लगता है तीन सवारियां

रिक्शा पर बैठी हैं। मलेशिया में रिक्शा चालक बिलकुल पीछे बैठता है। उसका पहिया और सीट पीछे है। यह मेरा नया अनुभव था।

रेलयात्रा के अनुभव

यहां रेलगाड़ी पर सफर भी एक नया अनुभव ग्रहण करना है। रेल क्या उसे तो एक लम्बी सुरंग कहना चाहिए आप एक तरफ से दूसरी तरफ तक आसानी से आ-जा सकते हैं। रात को सोने के लिए अच्छी व्यवस्था है। "बर्थ" खाट जितनी चौड़ी होती है। रिज़र्ब 'बर्थ' पर गद्दा, साफ धुली प्रेस की हुई चद्दर और तकिया मिलेगा। ऊपर के बर्थ पर जंगला और हर बर्थ पर परदा लगा होता है। आप चाहे परदा लगाकर एकान्त में रहें और शान्ति पाएं और निर्विघ्न सोएं। कहीं कोई आवाज या रुकावट नही होगी। हर तरह की सवारियां होती है पर शिष्टाचार का पूरा पालन होता है। हमारे यहां की तरह न गप्पे हांकने वाले मिलेंगे और न ताश खेलने वाले। रेल कर्मचारी अवश्य काम से आते-जाते हैं परन्तु सवारियां परदा लगाकर निश्चिन्त होकर सोती हैं। सफाई का पूरा ध्यान रखा जाता है। गाड़ी जब स्टेशन पर रुकती है तो पाखाने का दरवाज़ा बंद कर दिया जाता है। रेल कर्मचारी डिब्बों आदि की सफाई देखते हैं। गाड़ी चलने पर पाखाने का दरवाजा

खोला जाता है। गाड़ी खड़ी होने से पांच मिनट पहले कुछ गर्म पानी में भिगोए छोटे तौलिए दिए जाते हैं ताकि मुसाफिर उतरने से पहले मुंह हाथ साफ कर लें। मुझे उनकी यह बात सबसे अधिक पसन्द आई। यहां रेलगाड़ी में ही दुकानें हैं। इनमें जरूरत का सब कुछ मिल जाता है-चाय-मक्खन-अन्डा-मछली-मांस-मिठाई-फल-अखबार। रेल-स्टेशनों पर कोई दुकान नहीं मिलेगी। बड़े-बड़े जंकशनों पर अवश्य दुकाने, हैं अन्यथा यात्रियों की आवश्यकता की सभी चीजें गाड़ी में मिल जाती हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि भारत के मुकाबिले में यहां रेल का किराया ज्यादा ही है।

प्राकृतिक सौन्दर्य

मलेशिया को प्रकृति का वरदान प्राप्त है। अर्ध पहाड़ी इलाका होने के कारण इसमें प्रकृति के सभी सुन्दर रूप उपलब्ध हैं, मन को मोहने वाले मनोरम पहाड़ी दृश्य, हरे-भरे घने जंगल, उनके बीच में शांत निश्छल झील, नदियों का बहता कलकल पानी और इन सब से अकर्षक समुद्र तथा उसका तट! प्रकृति की विविधता में सुन्दरता है। सच तो यह है कि व्यक्ति जिस तरह का प्राकृतिक सौन्दर्य चाहता है, मलेशिया में उसे वैसा मिल सकता है। एक ओर कोलालम्पुर में नवीन आधुनिक वातावरण, दूसरी ओर इस कोलाहल से कुछ मील दूर पशु-पक्षियों, जीव-जन्तुओं

से भरे घने जंगलों के मनमोहक दृश्य। कुछ निषिद्ध प्रदेश भी हैं। कहीं कहीं अब भी लगता है जैसे आदिम युग में पहुच गए हों। ये कबीले नई रोशनो से दूर हैं परन्तु अब धीरे-धीरे प्रगति की ओर कदम बढ़ा रहे हैं। इस प्रकार मलेशिया में सुन्दरता और सभ्यता व नया और पुराना युग, दोनों एक साथ मिलते हैं।

दर्शनीय-स्थल

मलेशिया के दर्शनीय स्थल बहुत हैं। उनमें भी विविधता है जो यह सिद्ध करती है कि इस देश में कई जातियों-धर्मों का समन्वय है। कोलालम्पुर के पास 'बाटू गुफा'' के बारे में विदेशो सैलानियों का मत है कि इसे विश्व के सात सुन्दर स्थानों में क्यों नहीं रखा गया! इन गुफाओं में ४०० फुट की ऊँचाई पर 'सुब्रह्मण्यम्' (अर्थात् शिव) देवता की पूजा के लिए भारतीय ही नहीं, सभी जतियों के विदेशी भी पूजा के लिए आते हैं। पहले तो सीढ़ियां नहीं थी और भक्त तरह तरह की कठिनाइयां झेल कर वहां पहुँचते थे। अब २७२ सीढ़ियां हैं, रोशनी हो गई है

शनिवार-बाजार

कोलालम्पुर की सबसे विचित्र एवं मनोरंजक है शनिवार-रात को लगने वालो मार्केट। इसे मार्केट न कह

कर एक प्रकार से मेला कहना चाहिए। साज सामान के अतिरिक्त बीसियों आकर्षण की चीज़ें–जिनसे नए पुराने पहरावे, मलेशिया के विविध स्तरों के स्त्री-पुरुष इत्यादि कम मनोरंजन नहीं हैं। घूमते फिरते पता नहीं लगता कि रात कब और कैसे बीती। इस तरह की मार्केट की परम्परा पेनांग में भी है। लगता है कि, ऐसी मार्केट लागाना मलेशिया की विशिष्ट परम्परा है।

सबसे सुन्दर शहर: पेनांग

पेनांग मलेशिया का शायद सर्वाधिक सुन्दर शहर है, उसे प्रकृति का प्रभूत वरदान मिला है। पहाड़ी इलाका है-प्राकृतिक सौन्दर्य तो है ही, साथ में घेरा है समुद्र का। यहां सड़क बनी हुई है जो ४८ मील लम्बी है। पहाड़ियों की चोटी से समुद्र के मनमोहक दृश्य समुद्र में तीनरंगा पानी है, खुली धूप, फूलदार पेड़, घनी छाया, नए किस्म के रैस्टोरां-क्या यहां नही है। इस होटल का ऊपर का कमरा झूले की तरह झूलता है। फ्री पोर्ट होने के नाते नये से नया विदेशी माल सस्ते दामों पर मिलता रहता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से

सांस्कृतिक दृष्टि से भी यह मलेशिया का महत्वपूर्ण नगर है। ऐसा विश्वास है कि महात्मा बुद्ध ने तीन कदम रखे थे, एक भारत में, दूसरा लंका में और तीसरा मले-

बुद्ध की लेटे हुए १०८ फुट लम्बी मूर्ति है। उस पर भक्तों ने सोने की परत चढ़ा रखी है। इसलिए उसकी चमक बढ़ गई है। यहां एक शिव मन्दिर भी है।

सर्प मन्दिर

पेनांग का और आकर्षण का केन्द्र है सर्प मन्दिर, यह मंदिर बुद्ध महात्मा ने कई बरस पहले बनाया था जिसमें आस पास के सांपों की रक्षा और पूजा किया करता था। धीरे धीरे उसने एक पूजा मंच बनाया और उसके इर्द गिर्द जीवित सांप घूमते फिरते हैं, श्रदालु लोग उसकी पूजा अर्चना करते हैं। यहां एक पेगोडा शैली का सात मंजिला बुद्ध मंदिर है। वास्तव में, पेनांग मलेशिया का स्वप्न द्वीप है।

यहां प्रचार करने के बाद मुझे फिर सिंगापुर जाना था सिंगापुर से मुझे एक सप्ताह के लिए फिर सानुरोध प्रचार के लिए बुलाया गया था। मेरा आखरी भाषण २७ सितम्बर को हुआ।

यात्रा के निष्कर्ष

थाइलैंड मलेशिया सिंगापुर में भारतीय संस्कृति के कई पुराने गौरवपूर्ण चिन्ह मौजूद हैं जो इन्हें हमसे जोड़ते हैं। वास्तव में बुद्ध धर्म का जन्म हमारे यहां हुआ, और अब इन देशों में बौद्ध धर्म का विस्तृत प्रचार है। इनमें हिन्दू

संस्कृति के कई मंदिर हैं, इसलिए ये देश सांस्कृतिक स्तर पर भारत से सम्बद्ध रहेंगे। अब परिस्थितियां यदल रहीं हैं। सबसे मुख्य है राजनैतिक सत्ता जो भारत के अनकूलन हीं है। भारत और भारतवासियों को धैर्य, नीति एवं कौशल के साथ चलना होगा। भारत के कहीं ये पुराने रूप हम से अलग न हो जाएं।

७

हिमालय की गोद: नेपाल में

नेपाल में इसाई मिशनरियो के भयंकर जाल के फैलने के समाचारों से आर्य जगत् में बहुत चिंता हो रही थी। एक मात्र हिन्दू राज्य में इसाईयों की विनाशकारी नीति का सामना करने, अपने धर्म की रक्षा और विचारधारा के प्रचार के लिए एक उपयुक्त व्यक्ति की आवश्यकता थी। मैं बहुत अर्से से प्रचार क्षेत्र में हूं, इसलिए मैंने विनम्र भाव से अपनी सेवाएं प्रस्तुत कीं। सभी साथियों और प्रतिष्ठित नेताओं ने मुझे प्रोत्साहित किया। इसी सिलसिले में २८ सितम्बर १९५८ ई० को गुरुदत्त भवन, जालंधर में एक विशाल विदाई-समारोह का आयोजन किया गया। इसमें जालंधर, होशियारपुर, फगवाड़ा के कई आर्य नेता आये। उल्लेखनीय हैं—सभा के प्रधान आचार्य रामदेव, रा० ब० दीवान बद्रीदास, पूज्य महात्मा देवीचन्द, लाला जगत नारायण, प्रिंसिपल जी० डी० खन्ना—लाला मय्यादास सूरी, श्री तिलक राज सूरी, श्री सत्यार्थी। इनके अतिरिक्त समस्त आर्य समाजों के प्रधान तथा मंत्री, ट्रिब्यून, प्रताप, हिन्द समाचार, मिलाप, के सम्वाददाता भी विद्यमान थे। इन महानुभावों की शुभकामनाओं तथा आशीर्वाद से मेरा

उत्साह बढ़ा और मुझे लगा कि अब मैं अकेला नहीं हूं, इस अनुष्ठान में सारा आर्य जगत मेरे साथ है।

यात्रा के प्रथम पड़ाव

मैं १ ली अक्तूबर को नेपाल यात्रा के लिए चल पड़ा। सबसे पहले मैं दिल्ली रुका। यहां मैं स्वामी अभेदानंद और श्री ओम्प्रकाश त्यागी से मिला ताकि मैं उनकी नेपाल-यात्रा के अनुभव और परामर्श का अधिक से अधिक लाभ उठा सकूं। दिल्ली से मैं सीधा पटना पहुंचा। यहां मैंने बिहार प्रतिनिधि सभा के अधिकारियों से मिलकर नेपाल में प्रचार की रूपरेखा बनाई और नेपाल-सीमा पर स्थित रिकसौल आर्य समाज को अपना प्रचार-केन्द्र बनाया। यह नेपाल रेलवे का अंतिम स्टेशन है तथा मोटर-ट्रकों का बहुत बड़ा अड्डा है। प्रचार कार्य की शुरूआत की गई वीरगंज से जो पास ही नेपाल का एक नगर है। रिकसौल से २ दिन के सफर के बाद अमलेरागंज पहुंचा। यहां मैंने तीन दिन प्रचार किया। यहां न आर्य समाज है और न कोई विशेष आर्य समाजी। मैंने नेपाल को इसाईयों के घातक प्रचार से सुरक्षित रखने पर बल दिया। इस विषय का अच्छा प्रभाव पड़ा और खूब चर्चा रही। पहले अमलेरागंज से काठमांडू पैदल जाना पड़ता था परन्तु अब भारत सरकार की सहायता से एक नयी सड़क, त्रिभुवन राज पथ, बन गई

है। मार्ग अवश्य कठिन है। इस तरह १९ अक्तूबर १९५८ को मैं काठमांडू पहुंचा।

काठमांडू में

काठमांडू में यह जानकर मुझे आश्चर्य और खेद हुआ कि राजधानी में कोई आर्य समाज नहीं है। २-४ आर्य समाजी हैं जो अपने मकान के एक कमरे में रविवार-सत्संग लगाते हैं। यहां खुले आम सार्वजनिक सभा के तौर पर आर्य समाज का प्रचार नहीं हो सकता। धीरे धीरे मुझे सारी स्थिति समझ में आने लगी। अमर शहीद शुक्र-राज के भाई वाकपत राज जी और उनकी बहन चन्द्रकान्ता जी तथा कुछ और आर्य समाजी लोग भी हैं। इस बार के चुनाव में श्री हरिहर प्रसाद जी नए मंत्री चुने गए हैं। बड़े कर्मठ तथा उत्साही युवक हैं। मुझे पूरा भरोसा है कि वे निर्भय होकर कार्य करेंगे। श्री धर्म रत्न जी, भूतपूर्व डिप्टी मिनिस्टर (जिनके यहां मैं ठहरा हुआ था) समाज के काम में पूरा सहयोग दे रहे हैं। समाज के प्रधान श्री राजा-राम इन दिनों यहां थे नहीं, इसलिए उन से मेल न हो सका। यहां के सरकारी जनाना हस्पताल में खुशाब की रहने वाली एक पंजाबी महिला लेडी डाक्टर हैं। उनका नाम है धनदेवी। वह प्रचार कार्य में खूब दिलच-स्पी लेती हैं।

काठमांडू में प्रचार का स्वरूप सार्वजनिक कम और वैयक्तिक अधिक था। लोगों के घरों में सत्संग की व्यवस्था की गई। हिसार ज़िला के मारवाड़ियों ने मेरे प्रचार का प्रबन्ध अपनी गद्दियों पर किया। इस दिशा में उन्होंने पूरा सहयोग दिया।

आर्य शब्द से चिढ़

यहां पुतली रोड पर देहली के स्वामी भास्करानन्द ने एक आर्य संस्कृति संघ नामक संस्था खोल रखी है जिस में प्रतिदिन सायं ४ से ५ तक गीता, रामायण, उपनिषदों की कथा होती है। इस का प्रबन्ध हिन्दू सभा के प्रधान के अधीन है। यह एक ऐसी स्टेज है जिस पर सनातन धर्मी-आर्य समाजी कोई भी बोल सकता है। इसके दैनिक सत्संग में अच्छी उपस्थिति होने लगी थी, और इसका प्रभाव-क्षेत्र बढ़ रहा था। इसाई पादरी इस स्थिति को कहां बरदाश्त कर सकते थे! उन्होने चतुराई से राजगुरु, ब्राह्मणों, गोरखों को बहकाया-भड़काया कि यह संस्था असल में आर्य समाज की है, केवल नाम बदल कर आपके धार्मिक विश्वासों का खंडन तथा निंदा कर रही है। नतीजा यह निकला कि दैनिक सत्संग में हाज़री उखड़ने लगी। 'आर्य' शब्द को संघ के नाम के साथ जोड़ने से स्वामी जी सनातन धर्म का प्रचार भी न चला सके।

आर्य समाज की नींव

वास्तव में नेपाल में आर्य समाज के प्रचार का प्रारम्भ नेपाल केसरी श्री माधव राव जोशी के परिवार से जुड़ा हुआ है। माधव राव जोशी का जन्म नेपाल के प्रसिद्ध ज्योतिषी श्री कंठराज जोशी के घर हुआ। धार्मिक वातावरण होने के कारण उन्हें घर में मत मतांतरों की शिक्षा-दीक्षा मिली; यहां तक कि वाम-मार्ग का अनुसरण कर वे मांस-मदिरा का प्रचार करते रहे। यहीं उन्हें संतों, महंतों और पुजारियों के पतित एवं पाखंडी रूप का परिचय मिला। उनकी काली करतूतों को देख कर उन्हें धर्म के इस रूप से घृणा हो गई। इस मानसिक अवस्था में उन्हें धर्म के सही रूप जानने-समझने को जिज्ञासा बढ़ने लगी।

सत्य की खोज में स्वामी जी के दर्शन

वास्तव में बचपन से ही माधव राव एक असाधारण बालक की तरह प्रखर थे। स्वामी दयानन्द की तरह वे भी मां-बाप की इजाज़त के बिना, जगन्नाथ पुरी पहुंच गए। उन दिनों नेपाल से पटना तक पैदल आना पड़ता था क्योंकि रेल गाड़ी पटना से ही मिलती थी। रास्ते की अनेक कठिनाइयों का सामना करते हुए आप पुरी पहुचे। वहां आकर उन्हें निराशा ही मिली क्योंकि यहां भी धर्म के नाम पर पाखंड ही चल रहा था। इसी प्रकार एक बार

फिर उमंग उठी और आप घर से भाग कर काशी आए। यहां के तिलकधारी पंडों के आचरण से उन्हें बहुत दुःख हुआ। उन्हें नेपाल के वाम मार्गियों और इन पंडों में कोई अन्तर दिखाई नहीं दिया। ऐसी स्थिति में उनके पास नेपाल लौटने के अतिरिक्त कोई रास्ता ही न था, इधर, पैसे भी खत्म हो रहे थे। काशी में एक साधु के वेद प्रचार को लेकर बहुत चर्चा और बहस हो रही थी। जोशी जी ने सोचा कि घर लौटने से पहले क्यों न नए स्वामी के भी दर्शन कर लिए जाएं! परन्तु सौभाग्य से, स्वामी दयानन्द से इस प्रकार मेल और बातचीत उनके जीवन की महत्त्वपूर्ण घटना हो गई! स्वामी जी के भाषणों से वे इतने प्रभावित हुए कि आप पक्के वैदिक धर्मी बन कर स्वदेश लौटे।

नेपाल के राजपुरोहित होने के कारण उनका ज्यादा समय राजकुमारों के साथ बीतता था। चुस्त और हाज़िर जवाब होने के कारण ये लोकप्रिय थे। इस तरह खाने-पीने-घूमने आदि में समय गुजरने लगा। स्वामी दयानन्द के निर्वाण से जोशी जी को बहुत धक्का लगा। उन्हें अपने वर्तमान जीवन से घृणा एवं ग्लानि होने लगी–स्वामी जी के दर्शन पाकर भी क्यों मैं कुमार्ग पर चल रहा हूं! धिक्कार है ऐसे जीवन पर! इधर, राणाओं की आपसी फूट और राजकुमारों की मृत्यु से उनके मन पर गहरा असर पड़ा,

वैराग्य के भाव उभरने लगे। अपने भाई को साथ लेकर जोशी जी एक बार फिर काशी आए। काशी में दो वर्ष तक स्वाध्याय –सत्संग चलता रहा। यहां उन्होने सत्यार्थ प्रकाश को पाने की बहुत कोशिश की। दुर्भाग्य से, उन दिनों दुर्लभ होने के कारण वह मिला नहीं।

सत्यार्थ प्रकाश की तलाश में

एक दिन एक प्रसिद्ध नेपाली ज्योतिषी ने जोशी जी को घर पर बुलाया, बात-चीत के लिए। वहां रद्दी की टोकरी में फटे-पुराने सत्यार्थ प्रकाश पर अचानक नज़र पड़ी, तो इन्हें बहुत खुशी हुई। खूब उछले कूदे। बहुत अर्से की मेहनत कारगर सिद्ध हुई। सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने से आर्य-सिद्धान्तों के प्रति उनका विश्वास दृढ़ हो गया, शंकाएं दूर हो गईं और नवजीवन का संचार हुआ। धर्म का वास्तविक स्वरूप उजागर हुआ, ज्ञान का प्रकाश मिला। परिणाम को सोचे बिना जोशी जी ने नेपाल में वेद-प्रचार की शुरुआत की। सारे नेपाल में आर्य समाज की चर्चा होने लगी। जोशी जी के उत्साह और प्रभाव-शक्ति को देख कर विरोधियों ने प्रधान मंत्री के कान भरने शुरु किए। तरह-तरह के दोष लगाए गए परन्तु उदार विचारों के कारण उन्होंने जोशी जी को कुछ नहीं कहा। नए प्रधान मंत्री के आने पर भी शिकायतें आती रहीं, उन्हें बहकाया भी

गया । इनके आगे भी जोशी जी ने सत्यार्थ प्रकाश की चर्चा की और ज्ञान की गंगा में डुबकी लगाने के लिए आमंत्रित किया । जोशी जी अपने कार्य में शांति से जुटे रहे । इस प्रकार नेपाल में आर्य समाज के प्रचार को नींव माधवराव जोशी ने रखी ।

पिता से तेज पुत्र

जोशी जी के यशस्वी एवं उत्साही पुत्र पं० शुक्रराज शास्त्री ने तो अपने क्रांतिकारी स्वभाव के कारण आर्य समाज को नया गौरव प्रदान किया । पं० शुक्रराज संस्कृत हिन्दी, अंग्रेजी और नेपाली के विद्वान् तथा तथा पंजाब विश्वविद्यालय के शास्त्री थे । इन्होंने वेद, शास्त्र तथा स्वामी दयानंद के ग्रन्थों का अध्ययन किया, तथा बाल कक्षा से लेकर शंकर सूत्र तक भाष्य तैयार किए थे । शास्त्री जी ने वेद, रामायण, गीता आदि की कथाओं के द्वारा आर्य समाजी सिद्धान्तों का प्रचार किया । अपनी गंभीरता, मौलिकता तथा ओजस्वी भाषण-कला के कारण वे बहुत प्रसिद्ध थे । उन्होंने मूर्ति पूजा, पशु-बलि, मदिरा-पान के विरुद्ध आवाज उठाई और धर्म के सही रूप का प्रचार किया । इससे लोगों में जागृति होने लगी, उनमें धर्म के सही और झूठे रूप की पहचान बढ़ने लगी । कुछ लोग खुले तौर पर इन कुरीतियों की निंदा करने लगे । राणा लोगों

को यह सब कुछ कैसे पसंद आ सकता था ? वे अपनी हकूमत में किसी प्रकार को रुकावट नहीं सह सकते थे। शास्त्री जी को अपनी गतिविधियों के बारे में चेतावनी दी गई।

गांधी जी का मेल

इधर पं० शुक्रराज एक बार भारत आए और महात्मा गांधी से मिलकर उन्हें नेपाल में जनता की दयनीय स्थिति और राणाओं की साम्राज्यवादी नीति के बारे में बताया। नेपाल लौट कर उन्होंने अपने सहयोगियों के साथ मिलकर प्रजा परिषद् पार्टी का निर्माण किया। राणा सरकार आग बबूला हो गई। किसी भी हकूमत के लिए किसी देवता को डाकू और डाकू को देवता बनाने में क्या देर लगती है ? राणाओं ने अपनी कार्यवाही शुरू की। शास्त्री जी और उनकी पार्टी के लोगों को जेल में डाल दिया गया। शास्त्री जी के विरुद्ध भारत में जाकर नेताओं से मिलने और राज्य विरुद्ध साज़िश करने का अपराध लगाया गया। शास्त्री जी को बुलाकर राणा के सामने पेश किया गया। शास्त्री जी ने सलाम करने के बजाय नमस्कार किया। शास्त्री जी की हाज़िर जवाबी और तर्क पूर्ण जवाबों से सभी अधिकारी प्रभावित तो थे ही परन्तु क्रोध से आग बबूला हो रहे थे। उन्हें साफ पता लग रहा था कि समस्त क्रांति-

कारियों का यही गुरु है, सबसे पहले इसका सफाया किया जाए। उन पर यह जुर्म लगाया गया कि इन्होंने नारायण हट्टी में खूनी कांड करके राणाओं को मारने की साज़िश की थी। दूसरे शब्दों में, कीड़े ने हीरे को फोड़ने का यत्न किया ! जनता ने राणा से शास्त्री जी को माफी देने की प्रार्थना की। इधर, शास्त्री जी को भी इशारा किया गया कि वे भी मांफी मांग लें। शास्त्री जी ने एकदम विरोध किया और कहा—'मैंने कोई अपराध नहीं किया। किस बात की माफी मांगू ? अगर मेरा दोष है तो फिर सज़ा जरूर मिलनी चाहिए।' शास्त्री जी को फांसी के लिए जेल भेज दिया गया। जनता उनके साहस और आत्मबल से बहुत प्रभावित हुई। उन्होंने घर वालों को भी धैर्य एवं सयम रखने का आग्रह किया।

हंसते हुए जीवन-बलि

अन्तिम दिन—शाम के खाने के लिए शास्त्री जी बैठे ही थे कि बुलावा आ गया। खाना धरा धराया रह गया। रात के बारह बजे पुलिस कर्मचारियों का एक भरा ट्रक जेल में आ गया। दूसरी गाड़ी में राणा शमशेर सिंह और और दूसरे अधिकारी थे। शास्त्री जी को रस्सी से बांधकर दूर ले जाया गया। शास्त्री जी को एक पेड़ के नीचे कुछ ईंटो के सहारे खड़ा कर दिया गया। शास्त्री जी ने पुलिस

कर्मचारियों को पीछे कर स्वयं फंदा डालने का आग्रह किया। अमर शहीद ने हंसते हंसते अपने हाथों से रस्से को गले में डाला, और ओ३म्-ओ३म् कहते हुए अपने जीवन की बलि दी। शास्त्री जी का शव २४ घन्टे तक वहीं लटकाए रखा गया और उसके ऊपर मोटे शब्दों में यह लिख कर लटका दिया गया—'सारे देश को भटकाने वाला, क्रान्ति का गुरु, आर्य समाजी होने पर पर ऐसा ही दण्ड मिलना था। यह पेड़ आज भी नेपाल से भारत आने वाली सड़क पर खड़ा अमर शहीद की याद दिला रहा है। आज जनता इस पेड़ पर तिलक लगाती है। हर जाने वाले मुसाफिर का सिर श्रद्धा से झुक जाता है।

राणाओं का दमन चक्र

इसी दमन-नीति के कारण शास्त्री जी के साथी प्रसिद्ध आर्य समाजी श्री गंगा लाल जी को एक बांस बांध कर गोली से उड़ाया गया। दूसरे साथी श्री धर्म भक्त को पेड़ से लटका कर फांसी दी गई। पंजाब के रहने वाले मास्टर गुर दयाल सिंह इसी नीति के शिकार हुए और उनको कहां-कैसे समाप्त किया गया, इसका किसी को पता नहीं। वे यहां ट्यूटर थे। एक दिन पशुपति नाथ की मूर्ति को देखकर वे कह उठे—इस पत्थर के आगे लोग क्या मांग-सुन रहे हैं? सरकार के सिपाही सुन रहे थे। मास्टर जी को अपनी सही

ग्रौर सच्ची बात कहने की भारी कीमत चुकानी पड़ी। इन कुछ साहसी बलिदानियों का तो पता लग गया परन्तु जो निरीह जनता इस दमन-चक्र में पीसी होगी, उसका अन्दाजा लगाना आसान नहीं। कइयों को देश निकाला मिला, बहुत से जेल में ठूंस दिए गए। ग्राज नेपाल में जितना परिवर्वन एवं सुधार हुग्रा, वह इन्ही आर्य वीरों की कुरबानी का परिणाम है।

शोषरा नीति

ग्रसल में प्रत्येक क्षेत्र में राणाग्रों की नीति जनता को दबाने की थी। इसलिए जनता के प्रति उनका रवैया कठोर एवं सख्ती का रहा। इसके कई अजीब उदाहरण मिले हैं। नेपाल के एक नामी कवि ने जनता के हित के लिए एक पुस्तकालय खोलने की इजाज़त मांगी। इसे जुर्म समझा गया और उसे दो सौ रु० का जुरमाना देना पड़ा। इसी तरह, कलकत्ता के एक खुले मैदान में एक बार राणा साहब सैर कर रहे थे। एक नेपाली पास से गुजरा पर ग्रनजाने में उसने सरकार को सलाम नहीं की। इस ग्रपराध पर उसे नेपाल लौटते ही १०० कोड़ों का दंड दिया गया। पिछले सौ साल से नेपाल में रात ६ बजे से सुबह ५ बजे तक कर-फ्यू लगा हुआ है। एक व्यक्ति, तुलसी मेहर को गांधी भक्त होनें, चरखा खादी का प्रचार करने के ग्रपराध में

१२ साल की जेल का दंड दिया गया। सिनेमा हाल में दूसरे धर्म के लोग जा सकते हैं, हरिजन नहीं। यह सारी जानकारी मुझे एक प्रसिद्ध पत्रकार श्री रामराज की पुस्तक 'क्रान्ति से पहले नेपाल' से मिली है पर ऐसे और अनगिनत उदाहरण मिल जाएंगे जिनसे साफ सिद्ध होता है कि राणाओं की हकूमत में किसी प्रकार के परिवर्तन-सुधार की गुंजाइश नहीं। सच तो यह हैं कि राणा लोग अपनी सत्ता और अधिकार को बनाए रखने के लिए किसी प्रकार के परिवर्तन को स्वीकार नहीं कर सकते थे। वे स्वयं बड़े-बड़े महलों में ऐश्वर्य एवं विलास की ज़िदगी बिताते थे, उधर गरीबी में डूबी जनता पिछड़ो, गवांर थी। राणा लोगों की नीति इसी सिलसिले को बनाए रखने की थी ताकि वे सदा राजसी वैभव में रह सकें।

धर्म का स्वरूपः वाम मार्गी

उपर्युक्त नीति के अनुरूप ही राणा लोग धर्म में किसी प्रकार के सुधार को नहीअपना सकते थे। यहां धर्म का अर्थ है परम्परा-पोषण। नेपाल में शैव धर्म के वाम मार्ग का प्रचार अधिक है। इसलिए काठमांडू का सर्वप्रमुख मन्दिर पशुपति नाथ का है। यहां शिव और शक्ति की उपासना तो होगी ही। मेरा विचार था कि वाम मार्ग समाप्त हो चुका है परन्तु नेपाल में आकर मैंने यह महसूस

किया कि वह विभिन्न परम्पराओं के रूप में यहां प्रचलित है। विजयदशमी के त्यौहार पर जो मैंने यहां देखा-सुना, उसे लिखते हुए हाथ कांपते हैं।

विचित्र परम्पराएं

काठमांडू, वीर गंज पाटन, तथा भगतपुर में विजयदशमी के उपलक्ष में करीब एक लाख पशुओं की बलि दी जाती है। तीन दिन से गलियों-बाज़ारों में सैंकडों लोग कंधों पर भेड़, बकरी तथा भैंसे के कटे हुए सिर तथा मांस के टोकरे लेकर ऐसे आ-जा रहे थे जैसे हम लोग यहां दीवाली—दशहरे में मिठाई और फलों के टोकरे लेकर अपने नाते-रिश्तेदारों के पास जाते हैं।

पहले तो अष्टमी के दिन आम जनता की ओर से तुलजा भवानी के मन्दिर में भैंस, बकरे, भेड़ और मुर्गी की बलि दी जाती है। इसके बाद नेपाल सरकार की ओर से १०१ भैंसों की बलि दी जाती है। ऐसे अवसर पर सभी अधिकारियों का उपस्थित होना जरूरी होता है। सेना अधिकारी भी मिल्ट्री-बैंड के साथ आते हैं। भैंसों की बलि होते ही बैंड राष्ट्रीय धुन बजाता है। इधर, बलि के साथ साथ तांबे के बहुत बड़े बर्तन में रक्त जमा किया जाता है। पहले यह रक्त देवी को चढ़ाया जाता है, फिर, प्रधान सेनापति दोनों हाथ खून से रंगकर सरकारी झंडों पर

पंजे के निशान लगाता है। इस मौके पर हर बड़े अधिकारी को अपने परिवार की ओर से एक भैंसे की बलि देनी पड़ती है। भैंसे के लम्बाई-ऊंचाई वज़न का पहले से ही विधान है। उच्च अधिकारियों के साथ-साथ महाराज की उपस्थिति ज़रूरी होती है। यदि किसी कारण महाराज न आ सकें तो अपनी तलवार भेज देते हैं। पहले जिन भैंसों की बलि दी जाती है उनका मांस प्रसाद के रूप में बांटा जाता है। इसे उत्तम प्रसादी कहते हैं। यह है विजयादशमी त्यौहार को मनाने का तरीका जो सरकारी तौर पर मनाया जाता है। कहां भारत में बुराई का प्रतीक रावण का बुत जलाया जाता है, रामायण की कथा होती है, रामलीला होती है। अन्य त्यौहारों पर भी दूसरे मंदिरों में मांस-मदिरा का खुले आमप्रयोग होता है। इसे यहां बुरा न मानकर खुशी मनाने का साधन समझा जाता है। वाम मार्गी पंच मकार को मानते हैं, यहां भी उसका किसी न किसी तरह अनुसरण चल रहा है। इस बारे में सरकार किसी प्रकार के विरोध को सुनना नहीं चाहती। इस तरह जो व्यक्ति पशु बलि, मूर्ति पूजा, मांस-मदिरा की निंदा-खंडन करता है, उस को सरकार क्षमा नहीं करती।

इसाई प्रचार

इस तरह के वातावरण में इसाई प्रचार करना कठिन

नहीं। कारण, एक ओर जनता पिछड़ी एवं मूढ़ है, दूसरी ओर शासन में कठोरता है, अतः इसाइयों ने प्रलोभन की नीति को अपनाया। एक ओर स्कूल, अनाथालय, हस्पताल खोल कर यह दिखाया कि हम केवल भलाई चाहते हैं दूसरी ओर अधिकारियों को उचित-अनुचित साधनों से बहका-फुसला दिया। इसाइयों की घातक नीति को मैंने खूब उघाड़ा और जनता को बताया कि ये लोग कितने ख़तर-हो सकते हैं।

अब मैं नेपाल की उस सीमा पर पहुंच गया हूं जो गोरखपुर–गोंडा के साथ साथ लगती है। यहीं एक गांव है ठूठीबारी जिसके उत्साही युवकों ने १४-१५-१६ नवम्बर को आर्य समाज का उत्सव रखा हुआ था। इस अवसर पर आर्य प्रतिनिधि सभा, बिहार तथा उत्तर प्रदेश के उपदेशक और भजनीक आए हुए थे। एक प्रसिद्ध विद्वान श्री सुरेन्द्र जी भी आए हुए थे। उत्सव क्या वह तो एक मेला था। खेल-तमाशे, कई दुकानें आदि सजीं थीं। मैं भी उनके अनुरोध पर आया था। कई हज़ार लोग उपस्थित थे। उत्सव का पंडाल तो भारत में था परन्तु साथ वाले खेत और जनता के बैठने की ज़मीन नेपाल की थी। यहां भारतीय कम और नेपाली अधिक थे। यहां भी मेरे भाषण का लक्ष्य जनता को इसाइयों के धर्म प्रचार और उनके फरेब–जाल के बारे में

जागरूक करना रहा ।

यहां से मैं घितौनी घाट, घुगली होता हुआ आर्य समाज नानपारा पहुंचा । इस जगह पर भी इसाइयों का मिशन काम कर रहा है । यह वह स्मरणीय स्थान है जहां पिछले वर्ष पं० शान्ति प्रकाश के साथ इसाई पादरी का शास्त्रार्थ हुआ था । यहां पर मैंने खूब जम कर प्रचार कार्य किया । सर्वत्र अच्छा उत्साह था और हाज़री भी अच्छी थी ।

नानपारा के उत्साही मन्त्री श्री शाम लाल जी (ज़ो केशधारी हैं) को साथ लेकर मैं नेपाल गंज पहुंचा । इसके पास ही नेपाल-भारत सीमा है । भारत की सीमा में इसा-इयों का बहुत बड़ा केन्द्र है जहां अनाथालय, हस्पताल रैसक्यूहोम, वनिता-आश्रम हैं । यह नेपाल का प्रसिद्ध नगर है जहां भारतीय दूतावास की शाखा भी है ।

मुझे यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि बिना इजाज़त मैं प्रचार कार्य नहीं कर सकता । एक ही धर्म और संस्कृति को मानने वाले होते हुए भी मुझ पर प्रतिबन्ध लगाया गया । यहां का एक प्रतिनिधि-मंडल डिप्टी कमिश्नर से मिला । आदेश हुआ कि पहले लिखकर दो कि भाषण में क्या क्या बोलोगे । दूसरे दिन प्रतिनिधि मंडल के साथ मैं स्वयं प्रार्थना-पत्र ले गया । उसमें मैंने साफ लिख दिया कि मैं आर्य प्रतिनिधि सभा का उपदेशक हूं । मेरा काम धर्म-

प्रचार है। अपने भाषणों में मैं जनता को इसाइयों के खतरनाक धर्म-प्रचार से सावधान करता हूं । संसार में मुसलमानों और इसाइयों के कई देश हैं परन्तु हिन्दू राष्ट्र केवल एक ही है और वह है नेपाल ! इस पर भी भोली-पिछड़ी जनता को गुमराह कर इसाई पादरी धर्म-परिवर्तन कर रहे हैं । मैं हिन्दू धर्म और जाति की रक्षा के लिए प्रयत्नशील हूं ।

लंका में विभीषण का मकान

पढा करते थे कि लंका में केवल एक विभीषण का ही मकान था जिस पर राम-राम लिखा था। यहां मैं जिस मकान पर ठहरा हुआ हूं, वह नानपारा के प्रसिद्ध आर्य-समाजी का मकान है। इसका कुछ हिस्सा बना है और कुछ बन रहा है। इस मकान के द्वार पर जब गायत्री मंत्र लिखा जाने लगा तो सारे शहर में हलचल मच गई। छोटे-बड़े सभी अधिकारी धमकाने लगे कि वेद मंत्र क्यों लिखा जा रहा है, इसे अछूत भी पढ़ लेंगे जिनके लिए यह निषिद्ध है। राजपुरोहित ने भी बहुत विरोध किया। सबब से एक पंजाबी ओवरसीयर उनके पास आया हुआ था। उसने हिम्मत करके सब अधिकारियो को मुंहतोड़ उत्तर दिया और कहा कि यह मन्त्र मैंने लिखा है। मुझ पर मुकदमा चलाया जाए। बाजार में वेद-शास्त्र की कितनी पुस्तकें

बिकती हैं, उन पर कोई बंदिश है ? सब पढ़ सकते हैं। बड़ी कठिनाई से हमें आज्ञा मिली। ऐसी बातों को देख-सुन कर आसानी से अंदाज़ा लगाया जा सकता है कि यहां के लोग कितने पिछड़े हुए हैं और यहां पर धर्म-प्रचार की कितनी अधिक ज़रूरत है।

इस ओर कुछ कदम

वैदिक धर्म के प्रचार के सिलसिले में मैंने कुछ कदम उठाए। मैंने एक नेपाली विद्वान से नेपाली में एक पुस्तिका लिखवाई जिसमें आर्य समाज के दस नियम, मोटे-मोटे दूसरे सिद्धान्त शामिल हैं। मेरा आर्य जगत् से अनुरोध है कि इसके यथाशीघ्र प्रकाशन की व्यवस्था होनी चाहिए। इसी तरह मेरे हाथ नेपाली भाषा में लिखा सत्यार्थ प्रकाश आया। इसमें केवल १२ समुल्लास हैं। इसका अनुवाद किसी आर्य प्रेमी ने गुप्त रीति से किया क्योंकि राणाओं का प्रत्यक्ष विरोध तो था ही। शेष दो समुल्लास पूरे करवा कर उसके प्रकाशन का भी इंतज़ाम करना आर्य जगत् का कर्त्तव्य बनता है। इससे नेपाल में आर्य समाज के प्रचार को पुष्ट एवं रचनात्मक आधार मिलेगा और इस तरह हम अमर बलिदानी पं० शुक्रराज को सही श्रद्धांजलि अर्पित कर सकेंगे।

दूतावास में भाषण

२२ जनवरी, १९५९ ई० को भारतीय दूतावास में मेरे विशेष भाषण का प्रबन्ध किया गया। इस समारोह में दूतावास की ओर से नेपाल सरकार के उच्च अधिकारी तथा प्रतिष्ठित लोग आमंत्रित थे। लगातार डेढ़ घन्टा बोलने के बाद जब मैं शांति पाठ करने लगा तो सभी ओर से यह आग्रह किया गया कि कुछ और बोला जाए। इस तरह लगभग ढाई घन्टे तक मेरा भाषण चलता रहा। अधिकारी वर्ग की दिलचस्पी को देखकर मेरा उत्साह बढ़ा। मैंने भी खूब जम कर अपने विचार प्रकट किए।

इस भाषण में मैंने आमंत्रित महानुभावों का ध्यान इस बात की ओर खींचा कि दोनों देशों का धर्म, सभ्यता और संस्कृति एक हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि ऊपर से काफी अन्तर है परन्तु मूल प्रेरणा-स्रोत एक होने के कारण दोनों देशों को विरासत में समान परम्पराएं एवं संस्कार मिले हैं। अब संसार में एक मात्र हिन्दू राष्ट्र नेपाल ही है। ऐसी स्थिति में भारत-नेपाल मैत्री महत्त्वपूर्ण ही नहीं, आवश्यक भी है। मेरी हार्दिक इच्छा है कि हमारा यह समानधर्मी पड़ोसी देश साम्यवादी चीन और भारत के बीच लोहे की दीवार बनकर भारत की रक्षा का कारण बने। नेपाल स्वतंत्र एवं सशक्त रहेगा तो भारत को प्रसन्नता एवं

गौरव होगा। इस लिए नेपाल और भारत की जनता में सांस्कृतिक सम्बन्ध गहरे और मज़बूत होने चाहिए। मैं इसी ध्येय को सामने रख कर नेपाल का दौरा कर रहा हूं। हिन्दू धर्म सुख, शांति तथा परस्पर प्रेम, मेल जोल चाहता है। हमने संसार को सभ्यता और संस्कृति का प्रकाश दिया। आज उसी प्रकाश का प्रसार मैं यहां चाहता हूं। आज नेपाल को इस प्रकाश की आवश्यकता है। वैदिक धर्म मानव कल्याण का धर्म है। इसमें संकीर्णता और साम्प्रदायिकता नहीं है। समय के साथ परिवर्तन और सुधार आवश्यक होते हैं।

मैंने इसाई प्रचारकों के हथकंडों तथा भोली जनता को धर्म भ्रष्ट करने की नीति की निंदा की। उनके धर्म-परिवर्तन के प्रचार से हमें सावधान रहना चाहिए।

नेपाल के गोरखे सारे एशिया में वीर एवं साहसी योद्धा गिने जाते हैं। अनेक देशों का इतिहस उनके शूरवीरता से भरा पड़ा है। विभाजन के समय पंजाब में मुसलमानों के अत्याचार और जुल्म से गोरखों ने हिन्दू-सिखों की रक्षा की। हम शरणार्थी हृदय से उनके प्रति कृतज्ञ एवं आभारी हैं। मुझे पूरा भरोसा है कि गोरखे अपनी वीर परंपरा का पालन करते हुए अपनी धर्म-भूमि की रक्षा करेंगे।

इस व्याख्यान से वातावरण पर्याप्त अनुकूल हो गया। यह वही स्थान है जहां पिछले मास मेरे भाषण पर प्रतिबन्ध लगाया गया था। मैं प्रतिज्ञा करके यहां से चला था कि मैंने यहीं आकर अवश्य प्रचार करना है। अधिकारियों ने इस प्रतिबन्ध पर अब स्वयं खेद प्रकट किया। अब तो मुझे यहां तक आश्वासन दिया गया कि यहां पर जल्दी आर्य समाज की स्थापना की जाएगी।

गुरुद्वारा

काठमांडू में सिखों की धर्म भावना को देख कर श्रद्धा हुई और अपने साथियों पर लज्जा आई। काठमांडू वाटर वर्क्स में एक सिख मनोहर सिंह जी हैं। अकेले होने पर भी उन्होंने नई सड़क पर एक कमरा गुरुद्वारा के लिए ले रखा है। हर शनिवार को सत्संग लगता है। सभी सिख सपरिवार आते हैं। दूतावास के फौजी सिख भी आते हैं। खूब कीर्तन जमता है। मुझे भी उन्होंने आमंत्रित किया। मैंने २-३ गीत सुनाए, कुछ आर्य समाज के बारे में और कुछ अपने प्रचार-लक्ष्य के बारे में बताया।

आर्य जगत को चेतावनी

समय बहुत बदल रहा है। हमें अपने पड़ोसी देश की चिन्ता रखनी चाहिए। चीन अपने पांव फैला रहा है। इसमें कोई संदेह नहीं कि दोनों देशों की धार्मिक परम्पराएं

एक सी हैं फिर भी इस समय नेपाल में ऐसे निर्भीक एवं निष्ठावान आर्य वीर प्रचारकों की बहुत ज़रुरत है जो वहां के लोगों का सही मार्ग प्रदर्शन कर सकें। इस दिशा में आर्य जगत् को उपयुक्त कदम उठाने चाहिए नहीं तो परिस्थितियां हाथ में नहीं रहेंगी।